



It is not by a sudden stroke that the sunbeams of the day are
of any account to the world.

But the sun of duty is not so. It is a steady, unobscured light, which
no storm can ever extinguish, and which is the true source



पूर्वप्रकाशित ग्रन्थ ।

१ लघीयत्रयादिमंग्रह—इसमें भद्रकालकदेवकृत लघीयत्रय
सटीक, आचार्य अनन्तकीर्तिरचित लघु सर्वज्ञसिद्धि और बृहत्सर्वज्ञसिद्धि,
तथा अफलेकदेवकृत स्वरूपसम्बोजन इन चार ग्रन्थोंका संग्रह प्रकाशित
हुआ है । मूल्य १=)

२ सागारधर्माभूत मटीक—पण्डित प्रवर आशाधरका यह
प्रसिद्ध ग्रन्थ उनकी भव्यकुमुदचन्द्रिका नामकी संस्कृत टीका सहित
छपा है । मूल्य १=)

३ विष्णुतन्त्रनाटक—कवि श्रीहस्तिमल्लकृत । जयकुमार
आर मुलोचनाकी कथापर यह सुन्दर नाटक रचा गया है । मू० १=)

प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ ।

५ मैथिलीकल्याणनाटक—कवि श्रीहस्तिमल्लकृत । मू० ०=)

६ आशाधरकृत प्रणिष्ठाकल्प, ७ देवसेन गूरिकृत नयचक्र,

८ अंजनापवनजय नाटक—आदि आर कई ग्रन्थोंके
छपानेका भी प्रयत्न हो रहा है ।

नोट—ग्रन्थमालाके सब ग्रन्थ बम्बईके सब जैन बुकसेलरोंके
पास शोलापुर जैन बुकडिपोमें और दिगम्बर जैन पुस्तकालय सूतमें
मिळ सकेंगे ।

निवेदक—

नाथूराम प्रेमी, मंत्री
हीराबाग, बम्बई ।

प्रार्थनायें ।

१ इस ग्रन्थमालाका प्रत्येक ग्रन्थ लागतकी कीमतपर बेचा जाता है । ग्रन्थोंका उद्धार और प्रचार करना ही इसका उद्देश्य है । अतः प्रत्येक धर्मात्माको इसकी सहायता करना चाहिए और अपने मित्रोंमें कराना चाहिए ।

२ ग्रन्थमालाके लिए जो फण्ड हुआ है वह बहुत ही थोड़ा अर्थात् लगभग चार हजार रुपया है; पर यह काम इतना बड़ा है कि इसके लिए कमसे कम ५० हजारका फण्ड ज़रूर होना चाहिए । इसलिए इसके फण्डकी रकम बढ़ानेकी ओर प्रत्येक धनीका लक्ष्य रहना चाहिए ।

३ धर्मात्माओंको इसके प्रत्येक ग्रन्थकी कमसे कम २५ प्रतियोंके स्वामी ग्राहक बन जाना चाहिए । यदि पच्चीस पच्चीस प्रतियाँ लेनेवाले सिर्फ २० और दस दस प्रतियाँ लेनेवाले सिर्फ ५० ही ग्राहक इसके बन जायें, तो इसके द्वारा सैकड़ों ग्रन्थोंका उद्धार सहज ही हो सकता है । ग्रन्थोंकी कीमत बहुतही कम होनी है, इस कारण उनकी दस पच्चीस प्रतियाँ खरीद लेना साधारण गृहस्थोंके लिए भी कुछ कठिन नहीं है ।

४ कमसे कम २५० प्रतियाँ खरीदनेवालोंका फोटो और स्मरणपत्र इसके ग्रन्थोंमें लगाया जा सकता है, अतः इस ओर भी धनियोंको ध्यान देना चाहिए । ऐसा करनेसे धर्म और कीर्ति दोनोंकी साधना हो सकती है ।

५ ग्राह शार्दी, जन्मोत्सव, प्रतिष्ठा, आदि प्रत्येक आनन्द कार्योंमें दान करने समय प्रत्येक जैनीको इस मन्थाका स्मरण रखना चाहिए और शक्तिके अनुसार जितनी बन मंके उतनी सहायता इसकी करना चाहिए ।

हीराबाग पोस्ट, गिरगाँव-बन्धुवई]

प्राथी-
नाथूराम, प्रेमी-मंथो ।

माणिकचन्द्र दिगम्बर—जैनग्रन्थमालाकी नियमावली ।

१—इस ग्रन्थमालामें केवल दिगम्बर जैन सम्प्रदायके सस्कृत और प्राकृतिक भाषाके प्राचीन ग्रन्थ प्रकाशित होंगे । यदि कमेटी उचित समझेगी तो कभी कोई देशभाषाका महत्वपूर्ण ग्रन्थ भी प्रकाशित कर सकेगी ।

२—इसमें जितने ग्रन्थ प्रकाशित होंगे उनका मूल्य लागत मात्र रक्खा जायगा । लागतमें ग्रन्थ सम्पादन कराई, संशोधन कराई, छापाई, बैधाई आदिके सिवाय आकिस खर्च, व्याज और कमीशन भी शामिल समझा जायगा ।

३—यदि कोई धर्मात्मा किसी ग्रन्थकी तैयार कराईमें जो खर्च पटा है वह, अथवा उसका तीन चतुर्थांश, सहायतामें देंगे तो उनके नामका स्मरणपत्र और यदि वे चाहेंगे तो उनका फोटू भी उस ग्रन्थकी तमाम प्रतिषोंमें लगा दिया जायगा । जो महात्मा इससे कम सहायता करेंगे उनका भी नाम आदि यथायोग्य छपवा दिया जायगा ।

४—यदि सहायता करनेवाले महाशय चाहेंगे तो उनकी इच्छा-नुसार कुछ प्रतिषों जिनकी संख्या सहायताके मूल्यसे अधिक न होगी मुफ्तमें वितरण करनेके लिए दे दी जायेंगी ।

५—इसमें ग्रन्थमालाकी कमेटी द्वारा चुने हुए ग्रन्थ ही प्रकाशित पत्रव्यवहार करनेका पता—

नाथूराम प्रेमी,
हीराबाग, पो. गिरगाव, बम्बई ।

प्राथनाय ।

१ इस ग्रन्थमालाका प्रत्येक ग्रन्थ लागतकी कीमतपर बेवा है । ग्रन्थोंका उद्धार और प्रचार करना ही इसका उद्देश्य है । अतः प्रत्येक धर्मात्माको इसकी सहायता करना चाहिए और अपने मित्रोंको कारना चाहिए ।

२ ग्रन्थमालाके लिए जो फण्ड हुआ है वह बहुत ही थोड़ा अर्थात् लगभग चार हजार रुपया है; पर यह काम इतना बड़ा है कि इसके लिए कमसे कम ५० हजारका फण्ड ज़रूर होना चाहिए । इससे फण्डकी रकम बढ़ानेकी ओर प्रत्येक धनीका लक्ष्य रहना चाहिए ।

३ धर्मात्माओंको उसके प्रत्येक ग्रन्थकी कमसे कम २५ प्रति योंके श्यायी ग्राहक बन जाना चाहिए । यदि पश्चिम पश्चिम प्रतियों लेनेवाले सिर्फ २० और दस दस प्रति यों लेनेवाले सिर्फ ५० ही मात्रक इसके बन जायें, तो इसके द्वारा मैकड़ों ग्रन्थोंका उद्धार मन्त्र ही हो सकता है । ग्रन्थोंकी कीमत बहुतही कम होती है, इस कारण उनकी दस पश्चिम प्रतियाँ खरीद लेना साधारण धर्मियोंके लिए भी कुछ कठिन नहीं है ।

४ कमसे कम २५० प्रतियाँ मरीदनवालोंका फोटो और स्मरणपत्र इसके ग्रन्थोंमें लगाया जा सकता है, अतः इस ओर भी धनियोंको ध्यान देना चाहिए । ऐसा करनेसे धर्म और कर्म दोनोंही सहायता हो सकती है ।

५ श्राद्ध गार्दी, जन्मोत्सव, प्रमिता, आदि प्रत्येक आनन्द कार्यक्रमोंके अन्तर्गत प्रत्येक धर्मात्माको इस मालाका स्मरण रचना चाहिए । और श्राद्धके अन्तर्गत प्रमिता बन सकें उनकी सहायता इसकी करना चाहिए ।

१९०५-०६ ईसवी-४५५५]

श्राद्ध-
नाथूराम, प्रमिता-माला

माणिकचन्द्र दिगम्बर—जैनग्रन्थमालाकी नियमावली ।

१—इस ग्रन्थमालामें केवल दिगम्बर जैन सम्प्रदायके संस्कृत और प्राकृतिक भाषाके प्राचीन ग्रन्थ प्रकाशित होंगे । यदि कमेटी उचित समझेगी तो कभी कोई देशभाषाका महत्वपूर्ण ग्रन्थ भी प्रकाशित कर सकेगी ।

२—इसमें जितने ग्रन्थ प्रकाशित होंगे उनका मूल्य लागत मात्र रक्खा जायगा । लागतमें ग्रन्थ सम्पादन कराई, सशोधन कराई, छापाई, बैधाई आदिके सिवाय आगिस खर्च, न्याज और कमीशन भी शामिल समझा जायगा ।

३—यदि कोई धर्मात्मा किसी ग्रन्थकी तैयार कराईमें जो खर्च पड़ा है वह, अथवा उसका तीन चतुर्थांश, सहायतामें देंगे तो उनके नामका स्मरणपत्र और यदि वे चाहेंगे तो उनका फोटो भी उस ग्रन्थकी तयाम प्रतियोंमें लगा दिया जायगा । जो महात्मा इससे कम सहायता करेंगे उनका भी नाम आदि यथायोग्य छपवा दिया जायगा ।

४—यदि सहायता करनेवाले महाशय चाहेंगे तो उनकी इच्छा-नुसार कुछ प्रतियाँ जिनकी संख्या सहायताके मूल्यमें अधिक न होगी मुफ्तमें वितरण करनेके लिए दे दी जायेंगी ।

५—इसमें ग्रन्थमालाकी कमेटी द्वारा चुने हुए ग्रन्थ ही प्रकाशित पत्रव्यवहार करनेका पता—

नाथूराम प्रेमी,

हीराबाग, पो. गिरगांव, बम्बई ।

भाणिकचन्द-

दिगम्बरजैनग्रन्थमालासमिति ।

(प्रबन्धकारिणी समाके सम्य)

- १ राय बहादुर सेठ स्वरूपचन्द हुकुमचन्द ।
- २ " " " ति शेरुचन्द कल्याणमल ।
- ३ " " " ओंकारजी कस्तूरचन्द ।
- ४ सेठ गुरुमुखरायजी सुखानन्द ।
- ५ हीराचन्द नेमिचन्द आ० म जेस्ट्रेट ।
- ६ मि. लल्लूभाई प्रेमानन्द परीख एल. सी. ई. ।
- ७ सेठ ठाकुरदास भगवानदास जौहरी ।
- ८ ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी ।
- ९ पं धनलालजी काशलीवाल ।
- १० पं रघुचन्दजी शास्त्री ।
- ११ नाथूराम प्रेमी (मंत्री)

श्रीवादिराजसूरिः ।

संति जैनश्वेतादृशाः स्वल्पा र्थः सुविख्यातस्यैकीभाष्यतोत्रस्य कर्तुर्नाम
 नाकार्णिकं स्यात् । परंतु ईदृशा जना द्वित्रा एव दुःसाध्या येरिदं ज्ञातं
 स्याद्यन्त्रोयं वादिराजः, कदा बभूव, तस्य काभिः कश्ची रचनाभिः जैन-
 संप्रदाय उपहृतीवभूव । वयं पाठकानाम्प्रे अनेन लेखनेनाद्यास्यैव
 महानुभावस्य किञ्चित्परिचय दिश्यामः ।

वादिराजसूरिर्नन्दिसावन्पाचार्य आसीत् । तस्य परंपरायाः (अन्येयस्य)
 अरुंगलेति नाम आसीत् । परमयं नंदिमंघः स च नास्ति यस्य गणना चतुः
 मंथानां मध्ये कृता भवति, किंतु द्रमिडस्य द्राविडस्य वा संवत्स्यस्यो गच्छो
 भेदो वास्ति । पाठकानां मिथिलं स्यात् यदन्य द्राविडमंथस्य स्यापकः
 (स्यपादस्वामिनः शिष्यो यमनंदी अस्ति । अस्य गणना पंचत्रैर्नामासेषु
 कृतास्ति । द्राविडदेशे मन्वादेयास्य नाम द्राविडमंथ प्रथितः । स दक्षिणा-
 स्येति संभाव्यते । परंतु कर्णमुख-स्याद्वादविद्यापति- जगदेकमहत्वादी
 इत्याद्यनेकैः पदव्युत्पत्त्यासीत् । स महिपुरं कर्णमुखं विद्यापतिवैश्वरधीपाल-

१. धीमद्रमिलसुषेम्पिप्रदिंसंघेस्वरुद्रल ।
 अन्वयो भाति योऽनेयसाधुवाराशिपारा ॥

२. गोपुष्टद भेनवामो द्रविडो यापनीयक ।
 नि पिच्छिद्येति पंचंठे जैनाभाता प्रकीर्तिता ॥—नीनिमारः ।

३. यदनकर्णमुखं स्याद्वादविद्यापतिगत जगदेकमहत्वादीगुण एनिसिद्धी-
 वादिराजदेवदम् ।





श्रीपरमात्मने नमः ।
 श्रीमहादिगजगुरिभिरुचितं
 श्रीपार्श्वनाथचरितम् ।

प्रथमः सर्गः ।



श्रीपद्मनयनंमोगभष्यानंदकटेनये ।
 नमः श्रीपार्श्वनाथाय दानयंत्राचिनाह्वये ॥ १ ॥
 ब्रह्मदंत्यविनिमुक्ताः गायका यम्य पादयोः ।
 हिंसादोग्रपापेषु पुण्यपर्यधिषं द्युः ॥ २ ॥
 अग्निषयो ग्वा यम्य पूषंदेवेन निर्मितः ।
 तपसा महत्या निन्द्ये ह्यपुंशुःकुमपंकताम् ॥ ३ ॥
 गुण्योऽपि त्रिलोक्य गुरोर्द्रोदादियाद्रयः ।
 लाघवं नृत्तयद् यम्य दानयंत्रेति ययुः ॥ ४ ॥
 भूगर्भादुत्पंतप्रागनूडामणिमरीचिभिः ।
 आवृता यम्य धैर्येणैवाभ्यगज्यत मेदिनी ॥ ५ ॥
 आतपत्रं महाबोधैर्मम्य शुभ्रमिवांबुदं ।
 पेंद्रिनी विभरामाम्य पर्यंतस्येव मूर्धनि ॥ ६ ॥

१ धीरेव वपुःशय्या नवसंभोगेन भव्यातामानदस्य एषो मुहुरो देदुस्तस्मै ।
 २ ब्रह्मः बुधितो यो देवः कमटासुस्तंन विभिमुक्ताख्यता । ३ कमटेन पूर्ण-
 जन्मनो वैरिणा । ४ उत्तमत्त कार्यमागच्छतो नागस्य परलेद्रस्य शूडामणिमरी-
 चिभिः शिखामणिकिरणैः । ५ पद्मावती देवी ।

तापसैर्यधिंता यस्मिन् नित्योद्धोर्धपरव्यये ।
 अष्टिद्यंत घनेऽनुच्छाः स्वयं दुस्तकंशाखिनैः ॥ ७ ॥
 ज्ञानामृतार्णवे यत्र चित्ते मज्जति दुर्जये ।
 क्रोधदाषाम्निसंतापो दानवैर्द्रान्यवर्तत ॥ ८ ॥
 प्रह्वर्द्धानघमूर्धन्यमणिरागेण यद्गुः ।
 यभावम्रमिवाक्रांतं विद्युता इयामलेप्रभम् ॥ ९ ॥
 निःशेषलोकवृत्तांतमीक्षमाणं यमीश्वरं ।
 उपास्थिर्यत गीर्वाणाः कामचारभयादिव ॥ १० ॥
 अनंतगुणसाम्राज्यलक्ष्मीकांतमुपातिर्मम् ।
 अघहंतात्महंतं घंदिपीय तमव्ययम् ॥ ११ ॥
 अपि प्रहास्ये मांघे मे श्रेयस्कामितया प्रभोः ।
 कैवेयं चरितं नावर्था दोषं न पश्यति ॥ १२ ॥
 जडांशयोदयमपि भव्यं तद्वचनं भवेत् ।
 यच्चिन्तसिमुखं पश्यन्मयैकं न तु शोभते ॥ १३ ॥
 कुतस्तमो लयं याति घवोवार्तीयनेन चेत् ॥
 न विशेषुर्मनःसद्य सतां जिनगुणार्शवः ॥ १४ ॥
 अल्पसारापि मालेव स्फुरन्प्रायिकसङ्घणा ।
 कंठभूयणतां याति कवीनां काव्यपद्धतिः ॥ १५ ॥

१ कपिलादिभि । २ नित्योद्धोर्ध केवलज्ञान तदेव परश्रप. परश्रुर्पस्य
 तस्मिन् । ३ दुस्तकं दुष्टतर्कं एव शाखिनो वृशा. । ४ नमीभूतकमठशिरो-
 रजलौहित्येन । ५ मीलवर्णम् । ६ पूजयामासुः । ७ कामस्य चारुदाक्रमणा
 भयेन । ८ अतिमतीर्थकरस्य समीपवर्तिने पार्श्वनाथमित्यर्थः । ९ मूर्धन्वे
 १० कल्याणवाञ्छया । ११ कथयामि । १२ जडांशयाद् मूर्खादुदयः प्रादुर्भावो
 यस्य तत् । पक्षे-डलयोर्भेदात् जलाशयात्सरसः प्रादुर्भूतिदत्त्वतिर्पस्य तत् ।
 श्रीतगुणवज्जलादुन्नममपि पद्मगुणवत्तुयंमिमुगं यथा शोभते तथा मूर्खाकं
 वचनमपि सर्वज्ञमिमुखं शोभते । १३ वच एव वातायनं गहाशं तेन । १४ जिनेन्द्र-
 गुणा एव मरीचयः । १५ स्फुरन्तः प्रकाशमाना नावकस्य चरित्रस्वामिनः, पक्षे-
 मालामध्यस्थितमणेरुणा, शीर्षशाल्यादयः पक्षे सौर्गभ्यादयो यस्यां सा ।

अनुच्छदगुणसंपन्नं शृङ्गपिच्छं नतोऽस्मि तं ।
 पर्धीकुर्यति यं भव्या निर्घाणापोत्पत्तिर्णवः ॥ १६ ॥
 स्यामिनश्चरितं तस्य कस्य नो विस्वयापहं ।
 देवो गमेन सपेभो येनाद्यापि प्रददयेत् ॥ १७ ॥
 अचिन्त्यमदिमा देव्यः सोऽभियंघो हितेषिणा ।
 शम्भ्राद्य येन तिरुयंति साधुत्वं प्रतिलंभिताः ॥ १८ ॥
 स्वर्गा न एष योगीन्द्रो येनाक्षय्यमुखापहः ।
 अधिने भव्यसार्थाय दिशो रत्नकरंडकः ॥ १९ ॥
 तर्कभूयद्गमो देव्यः स जयत्यकलंकधीः ।
 जगद्भव्यमुपो येन दंडिताः शाक्यदस्वंगः ॥ २० ॥
 स्याद्वादगिरमाधित्य घादिमिहम्य गजिते ।
 दिग्नांगस्य मदध्यमे कीर्तिभंगो न दुर्घटः ॥ २१ ॥
 नमः शन्मैतये तस्मै भवकूपनिपातिनां ।
 सन्मतिर्विधृता येन सुखधामप्रवेशिनी ॥ २२ ॥
 जिनसेनमुनेस्त्वस्य माहात्म्यं केन कथ्यते ।
 शैलाकाः पुरुषाः सपे यद्ब्रह्मोद्यदावर्तिनः ॥ २३ ॥
 आश्रमनपाटिर्नायेन जीयतिर्दि निषधता ।
 अनंतैर्कीर्तिना मुनिरात्रिमार्गं च लक्ष्यते ॥ २४ ॥

१ समास्तानिदिग्घ वलाचरिच्छापरनामक इति धवणवेभ्युदम्यदिशालेखत-
 प्रतीयते । २ पशुस्थाने कुर्वन्ति साहाय्येनाधयनीत्यर्थं । ३ ऊर्ध्वमुत्पत्तिन्नु शीलं
 येषां ते । मोक्ष संगार इत्यर्थं । ४ समंतभद्राचार्यस्य । ५ तत्त्वार्थमूयमहभा-
 ष्यस्य भगवत्वरणरूपेणासमीमांशानामवेन स्तोत्रेण । ६ समंतभद्र । ७ रत्न-
 करणध्रावकाचार । ८ अकलंकदेव । ९ शाक्या बौद्धा एव दसवर्था ।
 १० बौद्धाचार्य दिग्नांगस्य । ११ सन्मतिविवरणनामकप्रथमं । १२ त्रिषष्टि-
 लाका पुरुषा । प्रार्थनमहापुरुषाणा जिनसाहित्ये शैलाका पुरुषा इति श्लोका ।
 १३ जीवतिर्दिकपुनूस्त्वर्वहतिर्दिप्रथमस्य कर्ता ।

कुतस्तथा तस्य सा शक्तिः पान्यस्तीनेर्महात्मनः ।
 श्रीपदध्वजं यस्य शाब्दिकान् कुर्वन् जनान् ॥ २५ ॥
 अनेकमेदमंघानाः मनंतो हृदये मुहुः ।
 याणां धनंजयोन्मुक्ताः कर्णस्यैव प्रियाः कथम् ॥ २६ ॥
 वंदेयानंनंवीर्याभ्यं यद्भागमृतवृष्टिभिः ।
 जगज्जिघन्मप्रियंणः शून्यवाद्दृताशनः ॥ २७ ॥
 क्रतुमूर्धं स्फुरद्भ्रतं विद्यानेदस्य विस्मयः ।
 शृण्वतामर्प्यलंकारं दीप्तिंगोपु रंगति ॥ २८ ॥
 विशेषवादिगीर्णुध्रवणायद्बुद्धयः ।
 अह्नेशादधिगच्छति विशेषाम्युदयं बुधाः ॥ २९ ॥
 चंद्रप्रभाभिसंबद्धा रम्पुष्टा मनः प्रियं ।
 कुमुद्वर्ताव नो घत्ते भारती रीरनेदिनः ॥ ३० ॥
 कुशलानि विपच्यंतां यदि मंति तथा मम ।
 यावज्जीवं न पश्यामि दुर्जनं स च मां यथा ॥ ३१ ॥
 अक्षमः सन् बुभुक्षार्यं तरेक्षुनं तथा क्षणं ।
 मां विभीषयते यद्बदहेतुकुपितः खलः ॥ ३२ ॥
 अथवाऽस्तु नमस्तस्मै दुर्जनायापि यद्भयात् ।
 सप्रयत्नपदन्यासा न प्रमोद्यति मन्मतिः ॥ ३३ ॥
 कलास्तत्र न वर्धते चंद्रस्येव कचेरिव ।
 कंठे विषेप्रहो यस्य धूर्जटेरिव दुर्जनेः ॥ ३४ ॥

१ जैनशाब्दटायनव्याकरणकर्तुर्नाम कदाचित्पाल्यकीर्तिः स्वान् । २ शाब्दिकान्
 वैयाकरणान् । ३ वाणाः शब्दाः शराश्च । ४ अर्जुनमन्त्रामा द्विसंघानकाव्यकर्ता
 कविश्च । ५ ध्वजस्य कुंतिपुत्रस्य च । ६ प्रमेयरत्नमालानामकृतकंप्रियकर्ता
 स एव मेघसम् ७ नष्टोऽभूत् । ८ श्लोकवार्तिहालहारम् । ९ विशेषवादिनामाचार्य-
 र्यस्य गीर्वाणी तस्याः शुक रचना तस्याः ध्वजे भावद्वा बुद्धिर्येषां । १० चंद्रप्रम-
 चरितेतिहायसंबन्धिनी । ११ व्याघ्रः । १२ प्रबलपूर्वकरचनायामुच्यता ।
 १३ प्रमादमावर्ति । १४ दोषग्रहः पक्षे ।

दुर्जनस्य बहुच्छिद्रं तत्प्रवेष्टुमनीभरताः ।
 प्रपिंसन्ति गुणाधिपं निम्छिद्रं धीमतां मनः ॥ ३५ ॥
 तन्मात् सतामुपस्कारं मत्प्रयागो व्यपेक्षते ।
 मणिराकरजः नुस्ये तज्जस्येय क्रियाधिधिम् ॥ ३६ ॥
 अग्निं भारतेषाम्येऽग्निन् जनांतः दांतकल्मषः ।
 सुखाभिरतिहेतुव्यात् सुखस्याख्यस्तनूभृताम् ॥ ३७ ॥
 घांतैलिप्रान्नरं श्योम शालीयामोदवांसितं ।
 भुज्यमाना जने स्वैरं यस्मिन्प्रुद्धासितांपराः ॥ ३८ ॥
 न त्यजन्ति बुलीनस्यं धान्यपाकममृश्यः ॥ ३९ ॥
 शंकां यत्र भुयो रात्रायुन्मुपप्रिधिदीप्तयः ।
 अयामशालिपाकेषु पामराणां प्रबुवंते ॥ ४० ॥
 सस्यंयुद्धीमुदा यत्र श्यामाङ्गीः प्रस्योन्मुषीः ।
 आपगाः स्वपयःपुष्टाः पश्यन्तीषांयुजक्षणैः ॥ ४१ ॥
 नद्यः स्फटिकपापाणदीप्तिभिर्नयत्र पूरिताः ।
 घट्तीयं शुचीं नुष्कंवारोऽपि वृहदभवः ॥ ४२ ॥
 इक्षयो यत्र घाटेषु पाकमंगलद्रमाः ।
 प्रवादोय प्रकल्प्यन्ते पांथङ्गमैतृयामुपे ॥ ४३ ॥
 यनेषु यत्र कर्पूरद्रुमरेणुसुगंधयः ।
 माधवीमुपगृह्णन्ते मारुता बहुबहमीः ॥ ४४ ॥

१ गुणाधानेऽर्थे कृष्णधानो मुद । २ भलक्षेत्रे । ३ भ्रमन्तोऽन्य एव प्रान्तं
 यत्र तत् । ४ शालीनामामोदेन सुगन्धि । ५ कृष्णमेषम् । ६ उद्वांसितानि
 गंधयुक्तानि अवरानि यासां । पक्षे-उद्वांसित अवरमावाशं यामिस्ता । ७ क
 शुद्धिभ्यां लीनस्य । अन्यत्र-उष्णद्रुमिक्त्वम् । ८ यथा स्वपयसा दुग्धेन परिपुष्ट
 पुत्रं प्रमोदुन्मुषीर्वाला मानर परंपति तथैव स्वपयसा जलेन पुष्टिगता सस्य
 वृद्धीर्नद्यः कमलरूपेभ्यः प्रेक्षेत् । ९ धीप्सतांविधि । १० लक्षं वाज्रंल या
 ता । ११ पथिकजनह्रातिकारिणीं शृषां सुष्वातीति तस्मै ।
 १५१२६। इति चतुर्थी ।

प्रथमः सर्गः ।

बुभुमानि शुगंभीनि त्रिप्लुटे सम्य वीरधो ।
विर्यंति भ्रमराः स्त्रीणां गृहे यत्राणि वहमाः ॥ ५५ ॥
तन्वीनां सहजं बाल्यं नयवीपनसंप्रदे ।
यत्र घृनां मनःकूपं निर्वेदेनेय गच्छति ॥ ५६ ॥
यत्र दुग्धच्छेदाद्गुग्गाश्चित्रं भोगैरगृहायतां ।
तन्वीकटाक्षविक्षेपा रागोपादानहेतयः ॥ ५७ ॥
वेदीरत्नप्रमोन्कीणां प्राणादाः यत्र पांडुराः ।
रौद्रघापदारन्मेषविभ्रमं साधु विभ्रते ॥ ५८ ॥
गृहाघोघ्नरत्नानां स्फुरंत्यो रदिममूचयः ।
दियाऽपि यत्र कुर्वति शंकामुल्कासु पश्यताम् ॥ ५९ ॥
आस्तीर्णा विपणिर्यत्र क्रव्यमाणिफयरोचिषा ।
प्राप्ता बालानपेनेय ध्योर्मपाधेयलिप्सया ॥ ६० ॥
यत्रैर्द्रनीलनिर्माणगृहमितीरुपस्थिताः ।
हेमयणांस्त्रियो भांति बालादर्शनिय विद्युतः ॥ ६१ ॥
मयनोत्संमिता यत्र पताकाः पीतमागुराः ।
भाययंत्यघने ध्योश्चि शण्दीधितिविभ्रमम् ॥ ६२ ॥
हरिन्मणिमयारंभामुन्मयूखां त्रिधिंतेलया ।
दूर्याकुंरधिया यत्र घत्सा घायंति देहलीम् ॥ ६३ ॥
अरविदाहयस्तत्र राजा धीनिलयोऽभवत् ।
मातुं दिक्चक्रमाक्रामध्वितीयेन तेजसा ॥ ६४ ॥
ध्याप्नुवंतं जहास्तेव न सहस्रेण तेजसा ॥ ६५ ॥

१ गृहारामे । २ वृक्षाणाम् । ३ दुग्धवच्छेदात् । ४ सेवनस्य-अदनस्य च ।
५ रागस्य प्रमोः लोहितस्य च । ६ आकाशगमनसमये कार्यकारिषायेव लब्धु-
पस्थिता इत्यर्थः । ७ इन्द्रनीलमणिनिर्मितगृहाणां मिती समुपस्थिता । ८ कृष्णमेघानु-
धान्यमगृहिशाली । ९ विद्युद्विभ्रमम् । १० अशुं खादितुमिच्छया । ११ प्रभू-

स मनोत्रकलाकांतिसुदयारकमंडलः ।
 राजा मृदुकरोल्लोमैः कुमुदानंदमादधौ ॥ ६६ ॥
 तादृशी पात्रता तस्य तं गच्छंतं करेच्छया ।
 शिरोदीरप्रदानाय शत्रवोऽपि यदप्यगुः ॥ ६७ ॥
 आश्रया कृतमर्यादे भुवने तस्य मध्यमे ।
 साऽदृशकारखाताद्याः शोभायं पत्तनादिषु ॥ ६८ ॥
 तस्य धर्मभृतो युद्धे गुणारोपितशक्यः ।
 पत्रिणोऽपि स्थिराद्यस्यानुदास्यश्रवणीभृतः ॥ ६९ ॥
 कामवर्षो स सर्वस्मिन्नुन्नतेष्वधिकक्रियः ।
 तथापि जलदस्येव वहुगुणाः सन्पथस्थितेः ॥ ७० ॥
 निर्गतं त्रिंशतस्तस्य न लभादृतमानतान् ।
 प्रत्यपद्यंत संतप्तं तथापि मितभाषिणम् ॥ ७१ ॥
 धर्म्यमात्राविपाकं स लोकस्त्रियत्या वहन्नरि ।
 विचिक्राय न कस्यापि चित्तेऽपायं द्यापनः ॥ ७२ ॥
 संयज्ञोऽपि सदाऽध्यक्षः करणकर्मवर्तिनिम् ।
 अमन्त्रः सन्नुपालश्चम्भूलमर्थमनभ्वरम् ॥ ७३ ॥
 जनस्य क्षुण्णमार्गेण दीर्घयात्रां प्रकुर्यंत ।
 श्रमतापहरास्तस्य प्रपो ह्य विभूतयः ॥ ७४ ॥
 सुमोऽपि चक्षुषा पश्यन् जगत्तेजोमयेन स ।
 दंडेन दर्शयामास मार्गमुन्मार्गगामिनाम् ॥ ७५ ॥
 कोरागमांन् स आकृशाहानार्थं सत्करदायोः ।
 कोपप्रसादयोस्मिद्धिमयापदरिमित्रयोः ॥ ७६ ॥

१ मनोहरा चतुष्पटकलाना कांतिसंघ, पक्षे-दला बोधशो भागः ।
 २ उदये प्रादुर्भावमये ईपदलमंडलवान् । ३ नृपश्रेष्ठ । ४ शोमलदिरणाना-
 मुन्मैः पक्षे रात्रप्रदेवन्वूवभागे । ५ कु पृथ्वी । ६ धिःशुभोप्रदानाय । ७ महस्य
 समव । ८ प्रःपुत्रन्, धृष्टयर्वध । ९ । संवर्धे । १० अःशुभकारवर्तिनिः ।
 ११ 'प्रसा वानीवरादिहा' इत्येवमः ।

प्रथमः सर्गः ।

दुःस्वकृपान् प्रजा भूपः स चित्रं जैत्रेयिकामः ।
यदुग्रतार दूरेऽपि मुजेनाजानुलंपिता ॥ ७७ ॥
तस्याराधयतो धर्मं नित्यं तत्परया धिया ।
अनद्यतां न कामार्थायभोगादिय भूपतेः ॥ ७८ ॥
तद्गुणागृतमंपातान् स्वयं कामदुषा मही ।
तत्फलानुभवे यन्नः प्रजानामवदोषितः ॥ ७९ ॥
तस्य गृहमविदस्नेजो द्रव्यमन्यदिय प्रजाः ।
अयुभुजन्पालं काले प्रच्छन्नस्यापि कर्मणः ॥ ८० ॥
द्वितपाकं प्रजानां स दाहमायम्य तेजसा ।
बुधेऽपि प्रचक्ष्ये न कृष्णवर्मा शुचिर्गुणः ॥ ८१ ॥
ते दुरामदमाग्राय विभ्वभूति प्रभावितम् ।
उपाचैदं घञो मंत्री विभ्वभूतिविशांपतिम् ॥ ८२ ॥
देव देव्यांगनापांगरुचिर्गौरगुणा गुणाः ।
किप्रैर्त्वापिपेरंस्ने मानुषो न रमूर्धनि ॥ ८३ ॥
त्वयि शास्त्रैरि लोकस्य शिष्यमेव गुणोत्तरं ।
प्रवीडयति मामेव केवलं प्रवला जरा ॥ ८४ ॥
देव ! पश्य जपाधारा विदुजा रत्नार्यात्मनः ।
जरसा जरटा- संतो निर्भस्म्यन्ते मम द्विजाः ॥ ८५ ॥
षाडंश्यवेषवेदेन स्पलतोऽनुपदं मम ।
चित्तशुद्धयेय निर्यत्या दृश्यते पांडुरं शिरम् ॥ ८६ ॥
दौर्बल्यं मम दृष्ट्येव जरिणो जनगर्हितं ।
दुःप्रेष्यघ्न घर्तते स्वकार्ये चक्षुगादयः ॥ ८७ ॥

१ जयशीलसकमवान । २ शमोगत इव । ३ मही तद्गुणादेव प्रसवित्रीलतो
प्रजानां तद्गोत्रं एव यत्नोऽपशिष्ट । ४ तत्तन्मये । ५ हीनवरिधोऽसिद्ध ।
६ शुचिर्गुणोऽपि विदुषोऽपि । ७ शमके । ८ रत्नवस्त्रधारिण । ९ निर्भ-
स्म्यन्ता । १० दुष्टभूतवत ।

जरासेयं सपत्नीय मद्रात्रानपतिनी ।
 प्रतिहंति च कांगानां मग्गमागमकौतुकम् ॥ ८८ ॥
 प्रेषितः प्रातःशैव्यमनिगदमियांशना ।
 मां प्रातःपानयं वंडः पुरन्तादिषु मृग्युगा ॥ ८९ ॥
 वयमा परिभेनेदमन्यंतोपासकंयने ।
 उचोगमिषु मृष्णायां निषेधति शिरो मम ॥ ९० ॥
 तनो मामनुमन्येषा जिगृभुं जिनदीक्षितं ।
 पयःपाकानेगारेऽयमन्यया मां न मुंचति ॥ ९१ ॥
 यदि दृष्टिर्न जनीयं कः पुमाप्रोपमयति ।
 गंभीरं भवपातालमयिर्दामृगमृष्णाया ॥ ९२ ॥
 इति विश्वाप्य राजानमाभ्वाभ्यांयुधर्गी प्रियां ।
 निषिध्यानुगतां पुर्यां स प्रतस्ये तपोवनम् ॥ ९३ ॥
 कमठे सत्यपि ज्येष्ठे तस्य पुत्रं गुणाधिकं ।
 मद्यभूर्ति महीपालः सावित्र्ये प्रत्यतिष्ठपत् ॥ ९४ ॥
 अमात्यलक्ष्मीमामाद्य स वभार धैमुंघरां ।
 समुद्रमेखलाकांतां प्रियामपि र्वमुंघराम् ॥ ९५ ॥
 आकृष्टास्तस्य मंत्रेण परेषामपि संपदः ।
 अनुरागप्रकरणेन समाश्लिष्यन्महीपतिम् ॥ ९६ ॥
 सर्वसहशंनोपायं श्रवणानुगतायति ।
 नृपस्तमात्मनो मेने तृतीयमिव लोचनम् ॥ ९७ ॥
 नीरसंभृत्या तेन तीक्ष्णयाऽजिह्वाधारया ।
 बुद्ध्या निर्विशयष्टया च विभिदे ममं शाश्रवम् ॥ ९८ ॥

१ आगमिष्यता । २ जरासा । ३ वृद्धावस्थाया निगलनम् । ४ जिनोपदिष्ट-
 सम्यग्दर्शनादिचतुर्विना सर्व एव सिध्दाज्ञानरूपमृगमृष्णावसाद् जन्मकूपे परंती-
 त्यर्थ । ५ धरिणीम् । ६ एतयात्री स्त्रीम् । ७ उभयत्रापि समानम् । ८ जलसहि-
 तया, नीरसं दुहदं मृतया घातितया दंडविश्वेत्तर्यः ।

प्रथमः सर्गः ।

भोगवृष्णानुरे मूर्खे कमटे पादपीप्रिये ।
 स पापम् स्नेहसंबंधात् परां भक्तिमददीयत् ॥ ९९ ॥
 पीदनम्याग्निगोमारमादिदय सचियाप्रजं ।
 सामात्यः प्रययी राजा वज्रवीरजिगीषया ॥ १०० ॥
 बलेन चलतस्वस्य भाराप्रान्ता समंततः ।
 प्रागेषापयता धात्री पश्चाद् मार्गे महीभृतः ॥ १०१ ॥
 अनेकैःमृदापद्मा दिक्षु प्रेतिद्धमतंगजा ।
 सानुरागयती तस्य धरेय चलिता घमूः ॥ १०२ ॥
 मूर्ध्निरेकत्रियायंधोस्तप्याभ्यागच्छतोऽद्रिभिः ।
 स्वागतं जगदे नूनं सेनाघोषप्रतिस्वर्नः ॥ १०३ ॥
 जदि गुन्ममयस्कंद पंकमुद्गर कंटकं ।
 गच्छन् प्रियं ध्यधनेय स बली वनपद्मतेः ॥ १०४ ॥
 ओरुदमिधुत्स्कंधं राजन्यपरिवेष्टितं ।
 श्वेतच्छत्रेण राजानं जनुर्जनिपदा जनाः ॥ १०५ ॥
 भूरजः सैन्यसंपातादुत्पपात नभःस्थलं ।
 तस्य धूम इयाम्यप्रस्तेजोपन्हेर्ज्वलिष्यतः ॥ १०६ ॥
 अर्पत्मीदरिमुदयं सपथं मधुपं तथा ।
 संशुचत्यत्र संपत्तिं यथा तीर्थो हिमागमः ॥ १०७ ॥
 निर्गत्य वज्रवीरतोऽपि मयलो नगराद् यदिः ।
 प्रत्यप्रदीन्महानाथं घाणयर्परनातिथिम् ॥ १०८ ॥
 खड्गसंघट्टनोच्चांतस्फुलिंगः शरमंडपैः ।
 युद्धं व्योम्नि तयोश्चक्रं नतद्विन्मोघयिन्नमम् ॥ १०९ ॥

१ वज्रवीरं जनुमिच्छया । २ बहुवृत्तिनिर्वेष्टिता, पक्षे-अवेक्ष्यपरवने ।
 ३ दिक्षु इयाता हस्तिनो यस्या । अन्यत्र-दिग्गजा । ४ भूधारकत्वाद्भु ।
 ५ समाम्ने ऋप्रत्ययांतस्य पूर्वनिपात । ६ वेनामिधिकारेत्यंभावात् । १०११५-
 नीत्यंभावे तृतीया । ७ जनपदे देशे भवा । ८ कुन्मितातिथिम् ।

प्रहिता यज्ञवीरेण द्यामपत्राः शिलीमुंग्याः ।
 नारविंदमुपामर्षन्नपि सेजोधिकम्बरम् ॥ ११० ॥
 घनत्रिकमंस्नाहमंगाम्मृदुरियामयन् ।
 मदंढमर्गविदम्य कर्कशं सोदुमश्रमः ॥ १११ ॥
 भयेन धायतो युद्धादव्ययस्थितदिङ्गताया ।
 तस्याग्रे चारविदम्य जयवार्तां जवाद् ययौ ॥ ११२ ॥
 राजा पश्चात् समाक्रम्य करणैर्वधनिष्कुरैः ।
 करग्रहेण युमुजे स पद्मनगरधियम् ॥ ११३ ॥
 नृपतिरहितमेयं यज्ञवीरं विजित्य
 स्वपुरमभिजगामोहामलदमीसमेतः ।
 विकर्चकुमुदताराहारशुभ्रं यशः स्वं
 दिशि दिशि स्वधूर्कगर्गपयर्त्किरुनरौघैः ॥ ११४ ॥
 वातोन्नतितकेतुयष्टिभुजया व्याह्वयमानस्तया
 तात्पर्यांश्चि विप्रयोगविधुरामासाद्य रम्यां पुरीं ।
 कुर्वन् जैनमंहप्रबंधविधिना लोकस्य भूरिधियं
 राजा वारिधिमेखलां वसुमतीं दीर्घं ररक्षानया ॥ ११५ ॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते धीपार्श्वजिनेश्वरचरिते
 महाकाव्येऽर्गविदमहाराजसंग्रामविजयो नाम
 प्रथम सर्ग ।

१ वाणाः । २ प्रभूतपराक्रमनाशात् । ३ शत्रुम् । ४ प्रकुलकमलताराहार-
 वच्छुक्रम् । ५ वातेनोन्नतिना उच्यते । ६ तात्पर्यांश्चि विप्रयोगेन विधुरां सु-
 प्यिताम् । ७ मह उद्धव उत्सव इत्यमरः ।

द्वितीयः सर्गः ।



अर्धव्रजाणं धनुर्भागनायाः पुण्यं घृणांतयितोपयेद्दी ।
 निवेदितात्मा स्वयियद्वितीयं चरो नराधीश्वरमानन्वाद् ॥ १ ॥
 स भूज्जभ्रुंशितमस्तनेन प्रणम्य भूमापुपयिष्य धार्मी ।
 प्रभोर्नियोगात् स्थानियोगमेवं प्रवचमे वचनुमनुवचमेण ॥ २ ॥
 शिरोमिरुच्यं जगदीश्वरगणामभिधेमुष्टं नृप ! शासनं ते ।
 यदास्तदाक्रामनि तेन स्वर्गा दिशो निजानार्थमरीचिशुद्धम् ॥ ३ ॥
 यशो विदुर्द्धं नृप ! ताव रीतं कलंकितं तन् कामटेन मन्ये ।
 पियांगिकांतामुपरंजनेन प्रावृहचनेनेव हिमाद्रिकूटम् ॥ ४ ॥
 स्वयि प्रयाते नृप ! वल्लर्यारं जेतुं स गोमा किल पौदनस्य ।
 श्रेच्छाधिहारी मरुभूनिवातां घमुंशरामधत पंकजार्दीम ॥ ५ ॥
 ज्वरुंरीकामुंकरुदिभाजा कर्णान् दृष्टेन निदृष्टयेताः ।
 तन्नत्रवाणेन निरगंलांख्यादधिष्यतासां हृदि मन्मथेन ॥ ६ ॥
 आवंशंकार्कदग्गुणोपपश्रीं तस्या कुचो निद्रितकुंभिकुंभी ।
 तयोस्तथेगाहुटनादिषाभूदनेकमेवं त्वत्तु तस्य चित्तम् ॥ ७ ॥
 स्वर्धनं चित्ते मुग्धेन्द्रधियं तस्या. स कामानलतीव्रतापि ।
 शमाय पापेन तथापि तस्य स्मराग्निरुद्धामविष्टुद्धिरामीन् ॥ ८ ॥
 स्मृतिप्रबंधेन घमुंशराया विवाधरं चेतसि मंदधानः ।
 स तमनिर्मुक्तशराप्रमाणममंस्त भद्रं मकाम्ध्वजस्य ॥ ९ ॥

१ अक्षिता मुद्रा वस्य तत् । २ अक्षितकरच्छुद्र । ३ विकुण्ठतारीमुख रज-
 यतीति तेन । ४ ज्वरुंशरी एव धनुर्वेदिना मजतीति तेन । ५ पूर्णकटोरं ।
 ६ क्षितीं हृदिन्त्या कुचो वात्या । ७ यद्यपि लोके चद्र. संतापतेतापहानये
 अस्ति, तथापि कमठकावश्यात् कलावकंधवन्नेन विवरीत एव आत् हायधेः
 ८ पुन पुन स्मरणेन ।

मनोरमापतिंनि नामिकूपे निपातिनं तेन मनमन्दीये ।
 पुनर्न कर्मण्युदतिष्ठत स्वे गभीरपातालमिव प्रविष्टम् ॥ १० ॥
 निषेधनायेव पुनः प्रवृद्धः कांचीगुणेनामिनिबध्यमानः ।
 सविस्तरस्तन्मनसाऽणुनाऽपि व्यातो मृगाश्या युगपद्विनयः ॥ ११ ॥
 धृत्या लतांगी करपल्लवे तामसकमारुपुमिवानिवृत्तम् ।
 निरुद्धपंचंद्रियवृत्तिचित्तं तं मृत्यवेऽयच्छदिव श्लेणेन ॥ १२ ॥
 पूर्वोपरालोचनकर्मशून्या तथोगतस्येव मतिस्तरीया ।
 बृहत्समारोपतया कृशांग्याः कृशेऽयंलतो मुनिराममोक्षीत् ॥ १३ ॥
 स विद्धलः सन्मदनानलेन किमप्यकृत्या जनतासमक्षं ।
 नृवीर ! विश्वास्य जनेन सार्धं न्यविश्रनोद्यानमशेषितात्मा ॥ १४ ॥
 अतिप्रवृद्धेन मनोभवाग्नेस्तमोष्मणा दुर्विपद्देन राजन् ।
 अनीयत पावकतां तदंगे पुनः पुनश्चंदनपंकलेपः ॥ १५ ॥
 स्थितोऽपि तस्यामशनैरशोकप्रवालशय्यां स विवृद्धतापः ।
 श्वालामिवाबुद्धदद्यानलस्य स्रगतुरस्यास्ति कुतो विवेकः ॥ १६ ॥
 स चंदनांभःकणसेकशीतिरायीजितः सन्कदलीद्रुमाणां ।
 मुहूर्तमापांडुरगर्मपंचविंपानलस्पृष्ट इवामुमूर्च्छ ॥ १७ ॥
 मुहुः समुत्थंदुकलाविशुद्धां बहन्मृणालीमुरसि सरातः ।
 असून् स्वकीयानर्दतस्तदानीं दंष्ट्रामिवातर्कयदंतकम् ॥ १८ ॥
 आंदोलितोपांतसरस्तरंगो विनर्तकश्चंदनवल्लरीणां ।
 विदाहकारी श्वसनोऽपि तस्य को वा प्रियो धर्मपथच्युतस्य ॥ १९ ॥
 सुगंधिनीलोत्पलतल्पशायी मुहुर्द्विरेफेरुपरि भ्रमद्भिः ।
 धूमायमानस्स इवाभवत् प्रागभिज्वलिष्यन् क्रशकेतनेन ॥ २० ॥
 आसादिताः पल्लयरागभंगं तच्छ्रासतापेन तदीयदुःखं ।
 सामीप्ययोगादिव बालचूताः स्वयं विभांगागतमन्वभूयन् ॥ २१ ॥

१ बुद्धस्य । २ कटिप्रदेशे । ३ मंतिष्ठति स्म । ४ जनसमुदायरम्मुसम् ।
 ५ उष्णताम् । ६ भक्षयन् । ७ बालः । ८ कामेन । ९ विभागे आगतम् ।

द्वितीयः सर्गः ।

अथाथ नित्यं दशो न कामनीप्रामिर्बलेण यथा विलम्बे ।
 ते निवृत्तार्थस्य तावत्परमं कामो हि कामं सममालनोति ॥२२॥
 नोपैतेषु कर्तव्येन पूर्यन्त कामे हृदयोपमाय ।
 किञ्चित्कालप्रदमोभिरांताममायर्वातां मदनज्वरस्य ॥ २३ ॥
 वा तावत्तामुपगृह्य तर्हीमघोपदिग्धं कालदंशमासा ।
 प्रियाप्यजने मुदेति ! ज्यवानो न बुध्यन्ते इयं वा तर्हीममग्ने ॥२४॥
 वा सर्वदृष्टप्रणदनापत्तं दीप्यां हृष्टमन्विच्छति नानुगमः ॥२५॥
 मिदाम्य घाघं कालदंशस्य घामं समालता तर्हीममेना ।
 अथादनागोचरया नमधुः तव्यांतिकं केतुनिपीदितस्य ॥२६॥
 वृत्तोपघात विनयेन तर्ही मलनदावाविदोपहृष्ट्या ।
 अष्टुक्त तव्यांतमनेगदधं त्रियं हि तस्मिन् विषये विदग्धाः ॥२७॥
 दावोणदेवं तमजाननीय ज्यस्य ते किं नु विमिश्रमस्य ।
 द्वियंति वा वंति दिमात्रि यथा प्रतिक्रियां कीदृशमादिनोति ॥२८॥
 न हृष्टुतत्र विचिद्वुंविदोमा आकष्यं घाघं मृगालोचनायाः ।
 द्विया द्वियेष प्रथिगुप्यमानो घ्रातृत्रियां कष्टमयोचदिष्टम् ॥ २९ ॥
 मनोमयान्वि ! निमिश्रमस्य द्विषाण्यदानि ज्यविधमस्य ।
 चिक्रिमितं घेष्ट समालतायां नोपागुतलन् मुलभं न येति ॥३०॥
 भेत्तव्यमादी पालोकाभगाइवंध्यवांगभा जने मनोत्र ।
 तेनोमर्षान्ममृगियं मतिमे प्रियाधिकदंष विमर्षि लील्यम् ॥३१॥
 मृगी मृगेणेष घने जनानां लज्जाभिमानेन मनोऽविदोमे ।
 तावन् समालतामति तीव्रपार्ती यावत् जार्दुं ह्यांगजन्मा ॥ ३२ ॥
 धुनोति नूनं जनने द्वितीये घमंलदापामनिलंचयंतं ।
 मृगेक्षणे ! न क्षमते मनोभूः क्षणेऽपि भंगं निजशासनम् ॥३३॥

१ हृष्टुतत्र न । २ नैत्राभिरामम् । ३ शोभनदन्ते । ४
 ५ अयोऽपराध । ६ उभयत्रापि हृष्टारक्षिता ।

अकारणोद्वेगकरो नराणां त्यया स सौहार्दमिथ प्रपन्नः ।
 उदासिता नन्वि ! नवांतिकस्यं यन् सांपतं मां प्रति पुण्यधन्या ॥ ३४ ॥
 भावोद्वेगं भावगर्भारमित्यं निवेद्य तस्मिन् विरते नतघ्नः ।
 अभाषतंयं भयकोपमिथं रसांतरं किंचिदिय प्रपन्ना ॥ ३५ ॥
 गुणगुण्णी योजयिंता जनस्य दोषानदोषी च निराकरिष्णुः ।
 यदि त्यमुन्मार्गमुपाजिहीयाश्चिरंततो नश्यति हंत पंथाः ॥ ३६ ॥
 विवेक्यतां विरमक्रियां संकल्पस्यं चरितं स्वरस्य ।
 न तेन कुर्यति यशो मल्लिष्टं लोकद्वयश्लाघ्यगुणं गुणाद्याः ॥ ३७ ॥
 मनःप्रसंगोऽपि परांगनायां क्षिणोति पुण्यं प्रथमं जनस्य ।
 न पुण्यक्रिस्तनुयाश्चप्रसंगं कृत्वापि सौम्यं लभते किमाप्ये ॥ ३८ ॥
 गुणानुदेषात् शुभग भविष्योलेदमीपेदो निष्ठिति मानसस्य ।
 मया परस्त्रीषु कृताभिलाषमीप्यायती योजननि निर्विषेसा ॥ ३९ ॥
 हितं यदीच्छेद्विद्विदो मं पुत्रयेयो मा चक्रयः कर्माणि ।
 इति कृदोक्ति प्रतिपिज्ञय तर्षी विभक्तस्यं कमठोऽप्यधत् ॥ ४० ॥
 विष्टंश्लो रामगतो ममायमुपययास्तन्यि ! नितंयशंते ।
 न शिष्या ने विनियतंनेऽसा रसानभिज्ञोऽधरपाडयस्य ॥ ४१ ॥
 धनुर्मतोत्रं नवर्यायताले कदा च शिशा विपुला च लक्ष्मीः ।
 अच्युत सयेप्रिदं निरर्थं मनोरमाणामघरोष्ठयिवम् ॥ ४२ ॥
 किंचापं काचतमेगले ! मया न भोगमीगन्नुपशांययामि ।
 स्मरन्तु मा तान्यि विष्टंश्लो निषायतामेव स्वादस्ययेति ॥ ४३ ॥

इति प्रयुक्तानुनयस्य तस्य

प्रियामु संख्यामगमम्भृगादी ।

स्वभावदस्यं मपरस्यत्रस्य

श्रीया मनः किन् कृतोपज्ञायम् ॥ ४३ ॥

१ शोचन्ति कृतमभा . २ मदीय १२ । ३ निर्या श्लोकाणां । ४ मया
 मया । मदीयस्य ५ कृतमभा . ६ कृ १ इत्यस्यो श्लोके मया मया ।

द्वितीयः सर्गः ।

अपि सर्गं विरूपराशमम्
 पुंग्वोऽपिगुणा भुजंपंजरेण ।
 न कामिनी संसपति स्वराज्ञां
 लम्घायवाना तु न किं करोति ॥ ४१ ॥
 रूपं बुद्धं यौषनमामिज्ञान्ये
 नतत्रयन्नात्र विचारयन्ति ।
 क्वचिच्छिष्टंऽपि रग्नाग्निविष्टाः
 बंदर्पंदेयं परितर्पयन्ति ॥ ४२ ॥
 उद्यत्प्रभाषस्य स्वोदिनादीं
 कागंधरुडापि नयाऽऽतपधीः ।
 सरागमादिदृष्यन्ति नानुरागा
 पत्रं न हि स्त्रीप्रवृत्तिर्मुण्डा ॥ ४३ ॥
 निषां प्रवृत्त्या पालदं समुद्धं
 छायोपकृतं नगुणाधर्यती ।
 द्रुमं लता पुष्पयती तु काले
 र्ध्वगोपमोगं मधुपाय दत्ते ॥ ४४ ॥
 आस्नामयं स्त्रीप्रवृत्तिप्रयादो
 व्याशूनिहेतुविषयात् मुर्मुक्षोः ।
 मुखे पर तस्य दुर्गन्धिं
 निर्दाम्यतां देव ! तदप्यदोषम् ॥ ४५ ॥
 न यौषनोष्माणमभीनधेता-
 न्यदेकपाशं गणिकाजनस्य ।
 यक्षस्यलेनोदजहाद् गृहस्ये
 मारीदहार कुच्यकुंभमारम् ॥ ५० ॥

१ शिक्षा । २ बाहुभ्यपञ्जरेण । ३ बंदर्पे शिष्टैर्द्रुमैर्वा । ४ पक्षी-पुष्प-
 रजसादृशी रजसुलेत्यर्थं । ५ मधु मय विवर्तीति तस्मै । ६ धूमराय ।

स राजगेहाद् दिवसेषु निर्वन् ।
 मातंगमानुह्यत मार्गपीतात् ।
 तवाप्यसंभोदय नमन् मनुष्या-
 नसह्यपीडानकरोद्दुरात्मा ॥ ५१ ॥
 अपश्यद्रापूरितरंध्रभागं
 तवानुकुर्यन् नृप ! राजधीयौ ।
 श्मैद्रयायी पुरसुंदरीणां
 नेत्रोत्पलैः सौधगवाक्षजालम् ॥ ५२ ॥
 श्तीदृशं गदितमन्यदन्यत्
 नरेन्द्र ! तस्यास्ति बहुप्रकारम् ।
 अनिर्जितात्मा कुरुते हि नो यत्
 तत्सर्वमुर्व्यामथवा प्रदुष्टम् ॥ ५३ ॥
 इत्थं यथायत् प्रणिगद्य तस्मि-
 न्निच्छाधिकप्रोक्तनृपप्रसादे ।
 चरे गते तं मरुभूतिरेयं
 प्रजायंमार्यो गिरमायभाषे ॥ ५४ ॥
 असत्यवचं न घदंति दंडा-
 दसह्यदुःखादनुजीयिनस्ते ।
 संयाद्यतां देय ! तथापि षाक्यं
 चरस्य तज्जदंढनिर्णयाय ॥ ५५ ॥
 विचार्य कुर्येहैभनेऽनुरागं
 जत्रस्य लक्ष्मीः खलु तग्निमिच्छात् ।
 बुद्धौ विशुद्धिं च परां निघ्नते
 द्वाराणि पापस्य हि ना पिघ्नते ॥ ५६ ॥

द्वितीयः वर्गः ।

अविष्टितमग्नप्रपि संनिवृष्टे

करोति चेदिन्द्रियबंधुपर्यगः ।

स्रमं प्रयतुं किंमाभिरंधिः

किमंग ! भूयो पिपये परोसे ॥ ५७ ॥

अतः इयं तस्य विविच्य दोषं

पतस्य मीत्या नृप ! निवृहीतुं ।

जनस्य मन्युज्यंलनापलीदा

तथाऽस्यथा म्लायति कीर्तिपती ॥ ५८ ॥

तदेति राज्ञा जनताममसं

विचिन्वताऽस्त्रायि तथा स कूर्मः ।

यतुंधैरामंपदनाघृण्ये

यथा व्यपतिष्ट एचो जनस्य ॥ ५९ ॥

जनान्तो राजगर्मापवर्ती

स्वराचिरुदं कमटं नगर्षाः ।

निर्यासयामास स लोष्टपालं

सूर्यातपत्रं परिभूय पापम् ॥ ६० ॥

अरात्रंपृष्टोपि विप्रयोग-

स्तस्याधिकं बंधुजनप्रियस्य ।

वचनं दुखं सचिदस्य दोषात्

मनसि न प्रेम महानुभायः ॥ ६१ ॥

चित्तं गते ज्येष्ठवियोगदुख-

भाराधमत्यादिय विप्रमोषं ।

चिराय तस्य प्रतिगुप्रदुष्टे-

न भोगयांच्छां दधुमिन्द्रियार्थाः ॥ ६२ ॥

१ बोधामिषंलृष्टा । २ मरुभूतिपत्नीपाणिप्रहणादि । ३ दुषतिप्रल,
 ४ मरुभूते ।

कुर्वन् प्रयत्नेन न पाण्डुरं
 विभोगदुःखी कमठानुयोगं ।
 अकल्पनीयं वननप्रसंगे
 देवेन नीतेन वनेन्द्रेण ॥ २३ ॥
 अमाल्य ! जानामि तयाप्रजया
 पृथांगमुद्ररागया गतया ।
 यद्यस्ति ते कौतुकमत्र गद्यं
 सगिन्नरं यस्मि तयाऽपधेहि ॥ २४ ॥
 इतोऽस्मिन् देसे दशगोज्जनात्
 भूभृत् न भूताचलनामधेयः ।
 अत्युत्थितं यस्य महस्रंधामा
 कृच्छ्रादतिक्रामति शृंगकूटम् ॥ २५ ॥
 आमुर्त्तनिष्यन्दमनीमहाग
 भुजालंताप्रग्धिनागमुद्राः ।
 घृह्मिर्निर्गथाः सखिलासभारा
 मनोरमा यद्य विभक्तिं निस्तीः ॥ २६ ॥
 यनद्रुमान्निशंरनुभ्रतोयं—
 धर्मोऽपि यो धर्मयति प्रकामम् ।
 पादाधिनानामभिरक्षणं यन्
 तदेव कृत्यं तु महोपतीनाम् ॥ २७ ॥
 यः पार्श्वभागप्रविलंबितेन
 विचित्रजीमूतकुथेन गर्था ।

१ मार्गं पदप्रतिलयं । २ कमठस्रंघनिम् । ३ सूर्यः । ४ आमुक्ता निष्यंदा
 निशंरा एव मनोहरा हारा यामाम् । ५ भुजा एव कृत्वात्मानामधे रियता नागा एव
 मुद्रा यामाम् । ६ नृहत्पापाणाः । ७ धर्मोऽपि । ८ विचित्रमेव एवाभरणविशेषस्तेन ।

द्वितीयः वर्गः ।

नक्षत्रमाणापिपीतमूर्धा
नक्षत्रमन्वेति राजापिगजम् ॥ १८ ॥

भीमो भृगो भानुकराभिर्मनाम्
यः सूर्यकान्तैर्ज्वलितैर्मनोषः ।

संश्रान्तुपात्रद्रपदिदुकांतैः
संश्रान्ता दोषगुणा भयंति ॥ १९ ॥

विलोचनानीय वरगंति यस्मिन्
विपृणंघाटीनमनोहराणि ।
नीलोत्पलधीरमणीयनारा—
सारांशगण्यायतिमंति मंति ॥ २० ॥

कीदंति संप्रभुं सट त्रिषामि—
संभयग यस्य गुणप्रमोदाः ।
भृगीगणेशोद्गालप्रमून—
संपाप्तमन्त्रेषु रत्नाष्टकेषु ॥ २१ ॥

गुदासुरंगंहरंगभंगुष्टं
संटीरषध्यानसुभीमसार्द्धैः ।
यः पायने यमंति यतमानो
मानंगमूषं कुरते द्विष्टम् ॥ २२ ॥

निहन्यवन्वेर्भविगणभाजा
निर्मूलितानैर्बधनद्रुमेण ।
मार्गेण यस्मिन् सघर्षः सप्तानां
निबुध्यते कायमहन्ययोगः ॥ २३ ॥

१ छुटितमीनमनोहराणि । २ शत्रुषु । ३ धर्मगीगमूहस्रोतेन गलति यानि
प्रक्षयान्तस्य रूपम् । ४ निहन्यवन्भवगजद्वयगहितेन । ५ उन्नादित्ता भवेत्
वनवृक्षा यस्य तेन । ६ बृहभागानाम् ।

तस्योपकंठे यनराजिरम्या
 तपोभूतामाधमभूमिरस्ति ।
 या प्रत्यहं स्योमनि होमभूमि—
 नैवांशुयाद्दधियमातनोति ॥ ७४ ॥
 कुचोपमेवैः कालशैत्रिमंभ्यं
 पयः क्षरंत्यो यतिमुग्धकन्याः ।
 स्वमध्यमाददयगुणेन यदगा
 लताद्रुमं यत्र विपर्ययन्ति ॥ ७५ ॥
 शास्यागुगा यत्र गृहीतशिशत
 नैगार्गिकं शायागुगुत्तंतः ।
 कुर्यन्ति मार्गाय नियोगदृष्ट्या
 तपोभूतामंधकहस्तयष्टीः ॥ ७६ ॥
 द्विर्तरहस्याभ्ययनस्य पश्चा—
 न्नेतरं पंक्तस्यागितानम् ।
 यत्रानुयाद्ः शुक्लशार्ङ्गिकाणा—
 माकर्षणे कर्षेत्तमायनधीः ॥ ७७ ॥
 अदाधरं त्रीर्णमुंगल्य तस्यां
 तपरिस्थितं तस्य किदांगदेवान् ।
 एतामयांक्रान्तिरिक्त्वा येना
 ज्ञाना तपस्यामगमप्रदीपं ॥ ७८ ॥
 केन समुत्तीत्य र्षीं तिस्रान्-
 मुलस्य बाहु म ति यामरोषु ।
 तपधमन् दुष्टागमद्विभ्रंति-
 प्तेकर्त्तव्यता निवृत्ति मार्जेभंगी ॥ ७९ ॥

द्वितीयः सर्गः ।

निषेधं धार्मिकस्य तस्मिन्
शूरीनमत्वारमिति किमते ।

अकल्पितं मनियेन गत्या
दुर्मोहपादास्वदितेन राज्ञा ॥ ८० ॥

प्रेमानुबंधः स्वजनं जनानां
वचिन् प्रभो ! द्विषत्तान् कुतोऽपि ।

परं प्रहृष्येत गुणप्रकाशं
दोषाणु न प्रव्ययते कदाऽपि ॥ ८१ ॥

अतो वियोगं न महे दुःखं
कृतागमोऽपि स्वयमप्रजस्य ।

पुनः करिष्यामि तयोतिके तं
प्रसाधतां देय ! तयैव भृत्यः ॥ ८२ ॥

भूताद्रिदुर्गे न तपोवियोगो
भूयान्निकारश्च न पादनेऽस्मिन् ।

बुद्धिं गुणेषु प्रदृशोति तस्य
प्रसादिं दोषं च पुरानिबिष्टः ॥ ८३ ॥

इति श्रुत्वा तमुवाच राज्ञा
शुचिन्मित्राहासितदंतकाल्या ।

कुर्वन् पुरस्ताद् गगनप्रदेशं
चंद्रोत्पलेय दिवोऽपि लिप्तम् ॥ ८४ ॥

अपश्यकान्ज्यमिदं हि पुंसि
यन् सर्वथा छापुजनप्रसंगः ।

विशेषविदेः से भयतपुपायः
धेयस्फरी ता च भयद्वयेऽपि ॥ ८५ ॥

१ गते । २ भयराधिनोऽपि । ३ बद्रिभ्या । ४ दिवसेऽपि । ५

अहं तथाऽपि प्रतिवेदेनीये
 वायेऽपि दोषे सति निर्विपंगः ।
 विवेकनिष्णातमना भनीषी
 किमंग ! याहोषु करोति तृष्णाम् ॥ ८६ ॥
 कुलेन कुर्यन्नापि रोदमात्रं
 शक्यो नियोगस्तथ निस्सरीनुम् ।
 भ्रात्रा निकारप्रतिकोपितेन
 प्राणभयायेय पुनः प्रयोगः ॥ ८७ ॥
 अगर्भमन्यच्छमि यद्युपेया
 स्तमुन्यणकोपद्वुताशदग्धम् ।
 न्ययं करास्तालितमस्तकं वा
 कुरुष्व कंटाभरणं भुतंगम् ॥ ८८ ॥
 अप्राप्य कामं नृपनेरमात्यः
 प्रत्यागतस्तं गृहमर्धगात्रे ।
 ज्यायाममुद्दिश्य न निर्तंगाम
 कोपादनां यदि वा कृतांतम् ॥ ८९ ॥
 मदीयनिम्ना मरुभुतियात्रा
 विचारयश्नति निर्विचारम् ।
 प्रसादशुभं मतिर्वादिनीय
 शिष्यैकमायाकृत्य न शुभमद्यम् ॥ ९० ॥
 विद्वेदयंस्तुंगतुषारशालम्
 बलादकोऽनेकगतप्रफुटः ।
 विनिष्टं बुद्धस्तव हायदान
 कृत्वांगि ! नग्नेय नमः त्रिपलं ॥ ९१ ॥

द्वितीयः सर्गः ।

त्रिनेत्रं प्राणालयमस्य मुक्तं
कल्पयति ! काष्ठेन समारोपयामः ।
चिराय देवेन त्रिनेत्रिनोऽस्मि
नेत्रामिन्मयो रचनाविदोऽयः ॥ १.२ ॥

इति प्रियामालपनेन राज्ञा
परं मुहूर्तात् दृष्टो न मेघः ।
प्रयंष्टेपातोऽहं दृष्टपात-
जापादितोऽलं दृष्टातीरविष्टः ॥ १.३ ॥

तथाऽपुद्गल्य प्रकृतिं न पर्यं-
धंतीत्यकारेति चिरनक्षेत्राः ।
अनेन पुद्गं चिरयेंद्रियाणा-
मनाऽपतत्वं पुटता घनेन ॥ १.४ ॥

षणुः स्वभाषानुचि मंगरीलं
निदानमेषं षणु दुष्टदृष्टेः ।
तदर्थमात्मनयबोधमूढा
अनात्मनीनं दृश्यन्ति यत्नम् ॥ १.५ ॥

दृष्टिर्दृष्टमेवं चितिं तावदस्मिन्
देहे दृष्टं जतो नियमन् ।
गृहीतनिर्मुक्तचिरंतनानां
नेत्रा पुनर्विस्मरतीति चिप्रम् ॥ १.६ ॥

अथप्रयच्छात्मदीनपात्रम्
क्षेत्रं पपुष्याधिगतीर्गृहाणाम् ।

१ कारयाम् । २ दृष्टिम् । ३ प्रकल्पयति एवोद्वेदं ह्यस्य पापेन
नाशिनोऽस्त्रदृष्टातीरविष्टो यस्य न । ४ आत्मविषेहमूर्खो । ५ द्वयोस्त्रयाणां च
दिनानां गेवधो यस्य तस्मिन् । ६ पूर्वं गृहीता पथापिर्मुक्ता ये, चिरंतन
पूर्वक्रममेवं चिरंतनयोः । ७ रोगरूपसंज्ञाम् ।

दुर्गे- एते तत्र विद्यन्तुः
 वास्तानि तन्मोक्षितानि विवेकी ॥ ९३ ॥
 श्रीगणेशायोऽपि विभक्तिं लक्ष्मीं
 तपो गुरुत्वात्परिसंभूतायाः ।
 एतं वास्तवंतीत्यन्वयिना तं
 विभुं च विनाति कंठिदुःखम् ॥ ९४ ॥
 लोकोऽपि भुक्तोऽप्यसौ त्रयं
 जीवेन च तं भावयन्भोजिताः ।
 नैव नृपस्य विदोषवशीः
 अत्र न विन्दति तत्रातिमाती ॥ ९५ ॥
 न दूरात् कस्योऽप्याकृतम् —
 एतद्व्यजाये गुरुवद् व्यपीले ।
 उ- कस्य च दूरीति वा । इत्यपि
 एताप्यसौ च दूरात् ३ १०५ ॥
 त्रयं च यथा दूरात्परिणतम् ।
 अ- शाब्दतः च दूरीति वा । इत्यपि ।
 अत्र च एतद् दूरात् परिणतम्
 च त्रयं च यथा दूरात् ३ १०६ ॥
 विदोषवशी च यथा दूरात्परिणतम्
 अत्र च यथा दूरात् परिणतम् ।
 विदोषवशी च यथा दूरात्परिणतम्
 अत्र च यथा दूरात् परिणतम् ।
 उ- कस्य च दूरीति वा । इत्यपि ।
 उ- कस्य च दूरीति वा । इत्यपि ।
 उ- कस्य च दूरीति वा । इत्यपि ।

द्वितीयः सर्गः

त्रिचिन्मकसंगचक्रांगलेगाः

गपुण्यमारा मधुपप्रणादेः ।

रुताः स्वयं दर्शितलाम्यलीला—

नस्येष गाथंति तपःप्रभावम् ॥ १०४ ॥

मुनेरशोकस्य घनप्रवेगे

निर्घोटेनायधमशोकपृथा ।

धुपं समम्बंघटदोष दर्पाद्

एवंजन्ति रामं नयपाशेषु ॥ १०५ ॥

नाम्बालिकाधीप्रभयं मुनीदो-

शुपं प्रशसंन एष द्रुमाणाम् ।

आप्रांशु रम्यादविमृष्टदर्पाः

कणंति लीलाकन्दमन्त्रपुष्टां ॥ १०६ ॥

यतिप्रभाषोपनतेन सूता

यसंनन्दरमानघनेगमेन ।

संशमदर्पा एष देय ! सपे

शाखोहमन्त्रु छलेभारतिप्रा ॥ १०७ ॥

तमोमुचलाम्य गुणप्रकाशान्

मदीश ! विस्तारयतो भियेष ।

अन्वेति नन्वागतमकटाक्ष्यं

तमलमालद्रुमसंनिवेशम् ॥ १०८ ॥

नयन् खलीलं सरसोऽभुविदून्

पापानिषाघर्मफटासंगंध ।

यदान्य ! घन्यद्रुमपुण्युंदो

मशो मरुत् न गुरुमभ्युदेति ॥ १०९ ॥

१ भ्रमरसंघे । २ बोधिल । ३ शाखासूदघन
सिन्धु । ४ गजद्रुमवृद्धताय ।

कुम्भलासेषा भारि

विपाकमाधुर्यभृतो मनोह्र-
 कमास्समासातिशयावरुद्धाः ।
 तपोभृतो विभ्रति सांकुमार्य
 जनार्य ! चाचो नवबल्लयश्च ॥ ११० ॥
 नचोद्गमाः स्यावरजंगमानां
 प्रमोदपात्रा यतिसंगमेन ।
 रजस्सुगंधि भ्रमरावलीढं
 क्षरन्ति नौगा यदि वा मदांभः ॥ १११ ॥
 क्षमोर्षपद्मा व्रतेतीरनूढा
 दृढं वहन्तस्सुमनेस्समृद्धाः ।
 मधुवंतानां प्रियमुन्नयन्ति
 वनद्रुमा देव ! यतेर्गुणाश्च ॥ ११२ ॥
 पिशांगितांगी परितो रजोमिः
 पुनांगनव्यप्रसवामिवांतैः ।
 विभाति साधुप्रणयोत्सवेन
 मही महीमाथ ! हिरर्षमयीव ॥ ११३ ॥
 तपोनियोगाद् यमिनो वनांते
 पूगद्रुमान् दशयतः फलानि ।
 त्रिभुष्यन्ति वैश्या इव नागवल्क्यो
 नखक्षतावर्जितपत्रभंगाः ॥ ११४ ॥

१ मनोहरा रचना शैली यासां । उभयत्रापि समम् । २ समासेनातिशये-
 नावरुद्धाः । अन्यत्र-समासः संक्षेपः । ३ अचला । ४ पृथ्वी, क्षातिव्य ।
 ५ बह्वी, विद्वमानता च । ६ पुण्याणि, मुष्टु चेतव्य । ७ भ्रमराणां, मधुमतिनां
 च । ८ सुवर्णमयीव ।

द्वितीयः सर्गः ।

सन्नेहिन्यात्मपात्रकव्य

विश्रान्तः सर्गोपे वृष ! विष्णुत्वाः ।

सर्वानि संभुय यमद्वयानां

साध्यान् सख्योद्भवाभिरागु ॥ ११५ ॥

सांशुर्वैभवयेति विदाम्य वाक्य

सिगाधिमंदायं समर्थमांगम ।

प्रमोदीने। मृपतिमंदायं

राक्षसेजं वैषमभाभ्यनंदम् ॥ ११६ ॥

एदामि सातामिगतश्च यथागु

सगद्यम. सांजतिर्मीलितबंध. ।

नताम नरमे मुनिपुंगवाय

गुणो हि गुण्यो विनय. प्रभूणाम् ॥ ११७ ॥

सांग्मेवराक्षानि विभूयमानि

स्वयं स्वगात्रादयतागितानि ।

अवच्छेदुर्ध्वंनपाय राजा

दानोत्तम मानयता हि मुष्टिः ॥ ११८ ॥

स घोषणाभ्यामृतपीतलोच.

सुंडालमागता मदार्द्रमंडम् ।

प्रस्थानमेगीत्यपुष्ययानं

षट्तिः पुंगोघानयनं जगाम ॥ ११९ ॥

नरिमघ्नोचद्रुमचारशाखा—

सतांचितगताटिकभुनिरण्णम् ।

पिधामृतस्वादविपुडमान

दृष्यप्रकपोदपि माऽपिषण्णम् ॥ १२० ॥

धर्मस्य सर्गमिव देहमिव क्षमाया
मोहस्य भंगमिव संघमिव मतानाम् ।

दृश्यं प्रकाशमिव तस्यधियो दयाया
मूर्तप्रयोगमिव सार्थमिवागमानाम् ॥ १२१ ॥

यतिपतिमथलोक्ष्यानेकपाद् दूरदेशे
क्षितिपतिर्यत्तानंस्नूणमुद्वेगद्वयः ।

सधिनयमुपगम्य क्षमातलघ्रातचूडा-
मणिरगणितलक्ष्मीः साधुयंघं ययंदे ॥ १२२ ॥

आनीतं स्यनियोगयत्तंनपरैः कर्मोत्तिकैस्तदक्षणा-
दाक्षिन्यामलतेजसा यमयतामाज्ञात-मप्यासतम् ।

म्रीदादृशिममक्तिनिर्भरतया पृष्ठे भुषस्तिष्ठता
पपृच्छमुनिरुच्युतः क्षितिभुजा स्याकृतमुदधिर्था ॥ १२३ ॥

इति श्रीपार्ष्वनाथचरिते श्रीपार्ष्वनाथचरिते
महाकाव्ये स्वयंप्रभासमने नाम

द्वितीयः सर्गः ।

तृतीयः सर्गः

—•• ❁ ••—

भयतापनिदाघपीडितं

भयता नाथ मनधिराय नः।

अमृतैद्युतिनेष नेत्रयोः

परिलम्बेन भृशं प्रमोदते ॥ १ ॥

धुतसंतमसं रजो धमन्

सविभाशद्युति मत्पयोन्मुखम् ।

तद्य संनिधिनाऽभवन्नृणां

हृदयं पद्ममिवाहिमद्युतेः ॥ २ ॥

विषयव्यतिपत्तानिस्पृहं

चरितं ते दुरितप्रमाज्जनम् ।

अपर्यन्तयसानपेशलं

सहदाहादमुपैति मानवः ॥ ३ ॥

स्वपरायनिषहंणं यला-

क्षिधारौक्यमणोपमकामम् ।

विल्लाः खलु ते भयादशा

नियमं निर्मलमुद्दहन्ति ये ॥ ४ ॥

मन्दिनानयलोक्ते जनो

जगदुघोनकृतो भयहृषान् ।

अविश्वेकतया मलीमसान्

रविदमीनिध सामेमद्विजः ॥ ५ ॥

१ शंभुमया । २ सुदंश । ३ जानन् । ४ सत्रपागो परिगमनमिदं इति
मित्यर्थं । ५ राहु ।

अथ कुंजरशैलनिर्क्षरो—

श्चलदच्छांशुविवर्द्धितद्रुमम् ।

मलये नृवर ! प्रतीयता—

मनुवेगापति सहस्रकीचनम् ॥ १८ ॥

जटिलाः परिधीतयल्कलाः

स्थिरदाग्वाश्चलदंतपंकजः ।

तरयः सययोधिवृद्धयो

विदिता यत्र तपोभृतोऽथवा ॥ १९ ॥

निजचापलतारनिस्वना

नयर्जीवापसरच्छिलीमुग्धाः ।

कुसुमस्तयकष्यजोद्धदा

रणधुर्यां इय यत्र शास्त्रिनः ॥ २० ॥

अतिमर्गनिर्भर्गमौरभे

कारिभग्नं मनु यत्र मंदनम् ।

अनुशोचति निभ्यसशर्ला

न रमन्नस्य गुणो न साहसाः ॥ २१ ॥

मुषिरस्यदाकुंतमंतत-

प्यनिमित्तं द्वयशास्त्रमर्लाकुत्रैः ।

अथयेव विदयने मह-

श्चलदाग्वाशिनकंटकादृतैः ॥ २२ ॥

यनदंतिमर्दांशुयागिता

वितता यद्विषमदृष्टदाश्रितम् ।

कुसुमेषु तदीयमौरभे

द्विगुणं विघ्ननि भृंगपेशलम् ॥ २३ ॥

१ मटः वेणु वेणु संज्ञितः । लपन्त्यः । २ कटाश्वपला संज्ञितो वृक्षो वेणुः । कटंश्वपले मध्ये पशुदो वेणुः । ३ कलाः । अमल्यः ।

तृतीयः सर्गः ।

यदनेषु विधेः नो बुद्धे—

निविष्टं भूरिजराहतावृत्तः ।

भुक्तिरम्यग्यात्तिर्नीमुखा

निविशते न पते गुणज्युताः ॥ २४ ॥

सुगमिनं पपहृषास्तदा

मयया यद्भनचंदनायलिः ।

परिरम्यतयेषु भोगिमि—

नयनांगः ममदंस्तु मज्यते ॥ २५ ॥

नवपाणयुताः कुञ्जातयो

विकटाक्षा विकलाः पलाशिनः ।

प्रतिबिभ्रन्ति मत्पयोध्रति

तस्यो यत्र न वन्यमानयाः ॥ २६ ॥

यिननोति पटंप्रये भृजं

प्रमदं यम्य मदा मता लता ।

सुगमिप्रमयाऽथ हंतिना—

मपि मृनाथ ! मदानतालता ॥ २७ ॥

तिलकां किलां डमिन्नयो

नखग्न्यामखप्रहारिणा ।

हरिणाऽपमगंन्यविष्टिताः

पृथुदाला इय यत्र कुञ्जराः ॥ २८ ॥

ममदं द्विर्दंनिपातिना—

स्तस्यो यम्य निगंधते पयः ।

मरेला ननु मार्गविप्लवः

नियतिमग्नं रुचितं विधीयते ॥ २९ ॥

निशि यत्र मुक्तंगमः स्फुरन्
मणये तत्किरेणोपदक्षितः ।
शयरेविञ्चरभियुष्यते
घनिता हि कचिदंग ! भृत्यके ॥ ३० ॥

ज्यन्तिषु यनांतशापिभि
निशि यस्मिन् दहनेषु चंदनैः ।
प्रविमुच्य मर्माग्नें ततं
तमयोदंशमटंति पटंपदाः ॥ ३१ ॥

विपृता तमगण्यगद्वं
प्रविशत्यद्रिगुहाधिया द्विपः ।
भ्रुयमचेति यत्र पंचता
ननु सिष्यात्प्रमत्तभंकारणम् ॥ ३२ ॥

शयना स्वयमुत्तरति यद
वसुधाया लयदीप्तनुत्तमो ।
लघुकांद्रवमण्युत्तये
त हि तन्वेषु गुणतया गुणः ॥ ३३ ॥

बद्धमूलधनं विधायकं
पृथुगोत्रा त्रयतया विवर्ती ।
विनलं वृद्धममायन
सुतासापि-दश-शततमम् ॥ ३४ ॥

एव वृथापर्वेर्नर्माग्ने
अनर्थापि नित्यवत्तदाभिवनः ।
श्रुत्पूजतया तमोपरीः
घटपरी मटनन्यागारिण ॥ ३५ ॥

तृतीयः सर्गः ।

स्वयेव स्वधेगनिम्बना
बलितुं भर्तृमर्मापमुद्यताः ।

तरलांगतरंगपाणिभिः
कुरती तीरलताः मग्नीरिव ॥ ३६ ॥

अभितस्नटमंयु महती -
तदनिर्य्यामकपापितोदरम् ।

प्रतिपूर्वं षट्स्यनारत्नं
विषमा वेगवती च वध्वरी ॥ ३७ ॥ कुलकम् ।

शुभलरमन्ममूहसंभृतः
सममून् तत्र महागजो गजः ।

प्रचितः पृथिवीतले भृशं
पृथिवीघोष इति प्रभाषितः ॥ ३८ ॥

सविभागशरीरभागपि
प्रबलप्रेमनैकतां गता ।

मदरी सुरभक्तुंस्त्रयो-
रमयस्तस्य वशाऽपि वध्वरी ॥ ३९ ॥

सकभूतिरपाम्य जीयितं
मनसात्तन विवेकमूढधीः ।

उदिते स तपोर्वनातरे
पविषोपाह्वयनंदनोऽजनि ॥ ४० ॥

चटुपाटलपुष्करोदर.
स विरिण्यनिजचिञ्जलीलया ।

पिनरी सुतराममूमुदत्
मजलमिनग्धघनाघनच्छविः ॥ ४१ ॥

घण्टा किमपि प्रपुष्यता
 स पितुः पीतघयास्ममीपगाः ।
 गिरिराजस्मीपयत्तिनी—
 महर्षद् गंडशिलोद्यधियम् ॥ ४२ ॥

कलमेन मरोहाम्बुकाः
 मयमुद्भिन्नविषाणकोटिना ।
 अभयन् प्रतियोद्भुमभमाः
 करिणस्तेन करालनेत्रमा ॥ ४३ ॥

अधुना जपने प्रयत्तिने
 ययगि प्राप्य न शूषनापनाम् ।
 वपुषा विविने विभूषयन्
 गिरिनिधेय विषाणतामुपेयुषा ॥ ४४ ॥

वनविद्यमणोऽयप्रमः
 मृदुदमप्यंदिनमपिरेन्दया ।
 व गिर्यानिरेमाऽयगाहने
 न हि नादं दुयमे मरिचन्द्रम् ॥ ४५ ॥

कर्यानिमुदया मृत्याद्
 यनरपुष्यगागमुदहन ।
 अयनारनिरेददतिम
 प्रयययेव यनाविषाणिताम् ॥ ४६ ॥

मयमप्ययवपुष्योऽपिने
 नयनेऽदवपुष्य गलपम् ।
 अदुगामनिव मरिचने
 न मृने ययुष्येव नयययुष्येव ॥ ४७ ॥

शुनीयः स्वर्गः ।

प्रतिपाति यनांतयानी —

बुग्गुमामोदिनि मंदमागने ।

स नदीपुत्रिनैनाभिगंधयो

त्रिनि निद्रामुत्पतिद्विगुच्छति ॥ ४८ ॥

अनुक्रम्य वधेन तापार्गः

बुपिनैराधमतो वदिः कृतः ।

बमठोपि किगनेमृगानां

निजचेष्टामहतीमपद्यत ॥ ४९ ॥

नगरे कचनारिमार्यकः—

निहतां गोमदेषे स नुग्धकः ।

अमुमिनैरमुप्यत रिये—

रपि दुष्कर्महतो न बंधयः ॥ ५० ॥

अजनिष्ट स पापचेष्टिनो—

गुनुमुच्य राजप्रियायने ।

एकुयाकुपणी पुराकृतं

ननु काले नियमन पच्यते ॥ ५१ ॥

पतिपुत्रधियोगदुःखिता

परिहृत्यैवमगूननुधरी ।

खलकर्मविपाकदोषतो

विपिनं तत्र दभूय मर्कटी ॥ ५२ ॥

नृप ! तत्र कपायरंजितं

प्रविधेयं विदुषा निजं मनः ।

निपुरस्ति कपायसंनिभो

न परस्संततदुःखलं मनः ॥ ५३ ॥

१ नदीपुत्रिनः । २ प्राप्नोति । ३ शक्यपश्या । ४ वाजरी । ५

अधिरम्य यथेष्टमाचर—

न्नुपचित्यानुमकर्मपुद्गलान् ।

परिपक्वस्नानुवालिह—

धनु शेते भृशदुःखितो जनः ॥ ५३ ॥

विनियम्य मनो जिनेश्वरे

विदधत् साधुसमाधिभायनाम् ।

वृशतां नय पंचपथजः

परिणामान्नुप ! पंधवाहिनः ॥ ५५ ॥

इति तस्य निशम्य शंसितं

प्रतमुत्थम्य मुखोद्गतं ययः ।

प्रभुश्रवमनायत क्षिते—

म्लपमं मीतमना भवन्नमात् ॥ ५६ ॥

अधिनश्वरसौख्यकारणं

प्रतियोध तमवाधया धिया ।

यिषयोपनिपातसंभयाः

प्रतिषर्जं प्रमयो न भुक्तयः ॥ ५७ ॥

अतिरिच्य नरेन्द्रमात्मन—

स्तनय गाल्यधुरे नगाधिया ।

स तपोपुत्रमप्रहीड यथा

विधि तस्यैव मुनेरनुज्ञया ॥ ५८ ॥

परिहृत्य बहिर्विभूषणं

मलिहागंगदहृंष्टादिकं ।

प्रतरत्तमयं पुनर्दधे

स धरे मुक्तिशृङ्खिलोद्येनात् ॥ ५९ ॥

गुणीषः स्वर्गः ।

अधिगम्य पुनर्यन्निर्णयं
स्वयमेतेषु न्व तीक्ष्णमेवमः ।
गुणगोपयन्मुञ्चमुषकं
स्वधिज्ञानमयापदङ्कृतम् ॥ ६० ॥

निरमुपतया नपधर-
प्रयविज्ञानमयेन वाशुषा ।
अपेक्षयमपदपदायुषः
न निजं हादनायमेवंधितम् ॥ ६१ ॥

परिहृत्य गुणी गणान्वयं
विदधान पुनरात्मसंस्त्रियां ।
जिनचन्द्यगृहान् विर्यन्दिषु
सह साधेन यया द्यानिधिः ॥ ६२ ॥

निधिते यणिजां निघानिने
नानि तन्मिप्रयमहादीयनम् ।
नमेया नमयानिभीतिमान्
कचिदाशिष्ट शिन्दानले यमी ॥ ६३ ॥

विनयायनतानतामस-
नशिगुमप्रमुखात् यणिग्वरान् ।
मन्वकदंसमईतक्षमा—
मशिपद् घर्मेकथां यथागमम् ॥ ६४ ॥

मरुभूतिचरः कवी नदा
पचिघोषो मदमेदभीषणः ।
जनघोषनिर्पादितधया
एतकोपः निघिरांतकं यया ॥ ६५ ॥

त्वरया गिरिराजमंनिभः
 स निवेशे वणिजां समग्रमत् ।
 ध्रुमिताणंवनोयद्दुःस्यतां
 कृतर्भातिर्जनसंहतिर्द्धी ॥ ६६ ॥
 मयनुन्नतया समुच्चरन्
 ककुचंतं जनताध्यनिर्यया ।
 वसुधोद्धहनाय दीक्षितान्
 स्वयमाक्रप्दुमियाष्टदिग्गजान् ॥ ६७ ॥
 अशमी समवर्तिनो वपुः
 कुपितस्य प्रथयन्निय द्विपः ।
 शिविरं निजघान वस्मरः
 करदंतप्रमुखंनिजायुधैः ॥ ६८ ॥
 मनुजं मनुजेन गां गथा
 हयमश्वेन लुठन् स निष्टुरम् ।
 अचर्धीदयधौ निजायुषां
 मनु तत्तस्य वधाय साधनम् ॥ ६९ ॥
 सुभटस्य समुत्क्षिपन् वपु-
 निहितस्य स्वकरेण सत्पथे ।
 इयतीति पराक्रमोभ्रति—
 गुणवश्यः स्वयमग्रवीदिव ॥ ७० ॥
 नमसि प्रहिता मरावली
 द्विरदंतस्य करेण सक्षता ।
 रुषिरेण सिपेच भूयसा
 निजमन्युप्रचयोपमाभृता ॥ ७१ ॥

तृतीयः सर्गः ।

अपलंभ्य करेण पादयोः
 क्षितिपृष्ठे रदिना निर्घटितम् ।
 क्षतधा विभिदे नृणां शिरो
 न निकारानि स्वहोत्तमांगता ॥ ७२ ॥

अभजन् गजदंतरीलिता—
 स्तुरगाः शोणितशोणमूर्त्तयः ।
 शशिकोटिविंशतिरोगो
 नयसंभ्याजलदम् विघ्नमम् ॥ ७३ ॥

विनिहृत्य रुपा तनूभृतां
 प्रविहीणेषु शिरस्सु दंतिना ।
 षडुदिग्मुत्पत्ता स्वयं दधे
 सभियेव प्रपलायितुं भुवा ॥ ७४ ॥

इति भूमिविहायनोर्यधं
 द्विष्टे तन्वनि सार्धयासिनाम् ।
 रुधिरप्रवहा तरंगिणी
 यनमूमायुदपादि भूयसी ॥ ७५ ॥

मदस्यैरभलोभविघ्नमम्—
 भ्रमरालीकलदीर्घसंस्तनम् ।
 निजविप्रमकीर्त्तनोपमं
 स विभृष्यन् विपरीतेधेदकः ॥ ७६ ॥

स हि तांयकगलनिर्गमे
 नृकबंधं परियर्त्तिताकृतिम् ।
 प्रविभृत्य करेण विघ्नम्
 स्तुपनर्था यतिपुंगवं द्विपः ॥ ७७ ॥

विपरीतरीता । २ चंद्रविरणविरकारितेज्य । ३ मिथ्यादान

मुनिराजविलोकनक्षण—

प्रतिबुद्धेतरजन्मसंस्क्रियः ।

तमयुद्धं स पीदनाधिपं

मरुभूतिं स्वमपि द्विपाधिपः ॥ ७८ ॥

प्रतिबुद्धमना भयस्थितौ

स विनिन्दन्निजकर्म निमोदः ।

प्रणनाम मुनीन्द्रपादयो—

सुन्दोकोद्भूतशाण्डलोचनः ॥ ७९ ॥

गृधुभीतिपलापिता जनाः

पुनरभ्येय मयालयोपितः ।

अरविदमुनीन्द्रसन्निधौ

सुनिर नभ्युर्येष्य विमपम् ॥ ८० ॥

अयं च प्रणिधाय संयमी

मरुभूतिं प्रतिपद्य तं गजम् ।

कृपया द्विपकर्मलाघय

प्रतिभौ पायमयात्तदीदृशीम् ॥ ८१ ॥

कृशालं तत्र मद्र किं पुनः

भारति ध्यकर्मिभद्र 'पीदने ।

सन्निपश्यन्मद्रं च भुवति -

नेनु वृक्ष्यांश्च इमी मिथ प्रियौ ॥ ८२ ॥

अनुशासनानीकृतौ मया न

मनमस्मात्तमुदात्तं यद्वनः ।

वदितं तत्र तत्र कर्मणा

मृगप्रमेदमर्थानिने दया ॥ ८३ ॥

इतर्वदितवत्तं मानसं

निन्दितं तत्परिमात्रेण वनः ।

तृतीयः सर्गः ।

शुच्यं पुञ्जोपदितं
कथमुत्कृष्टमनो दितपिणां ॥ ८२ ॥

मदमुग्धमिदं क जन्म ते
क पुनर्मत्रिपदं महोदयम् ।

मुग्धीकुर्वते हि दुष्टं
ननु कर्मानयबोधं दितम् ॥ ८५ ॥

अवधेयमिदं ततस्त्वया
त्रिनयमादपरं न जन्मिनाम् ।

भवदुःखनिवर्हणक्षमं
मुख्यन्नोपनतं निरूप्यते ॥ ८६ ॥

मुखमिन्द्रुदपायहे रश्मि
जिततद्भागमिधेयवस्तुषु ।

भयति त्वमनेन कर्मणा
गज ! मन्यस्त्वममृदमानसः ॥ ८७ ॥

मलपंचकवर्जितानि
दृढमन्यस्त्वमगं महागुणम् ।

गजरत्न ! जगत्रयीगिरा—
मणिता ते दधतो भविष्यति ॥ ८८ ॥

जितपुंगवपादपद्मयो
स्तनु भक्ति शतमन्युमान्ययोः ।

दुरितदुमपंक्तिपाटने
भयतः मेष परस्वधायते ॥ ८९ ॥

कुट कुंजर ! मानसे रति
दृढमन्यस्त्वमरालराजिते ।

त्यमणुमतपद्मसद्यनि

प्रियपुण्यांशु निगाहा पीयताम् ॥ ९० ॥

जति कोमपायकारणं

जति प्रौढागदमं मरोमतिम् ।

गतगाज ' तदीति तद्वरं

गमभेरीं च जहाति देहिभिः ॥ ९१ ॥

इति ललापिदो वयोऽमृतं

पतिजघान पुरो मतागतः ।

विक्रमकर्मपुत्रकर्मणं

पुनरालय निगम्य पादयो ॥ ९२ ॥

भाजनय मत्त मृतीभ्यः

प्रोत्त ममदमभगता गिरा ।

नमृतीभ्यः कृती च तस्मिन्पान

मृत्विच मडिहकारितुं विवच ॥ ९३ ॥

मृत्विचभ्यः मृत्विचमातुते

भूमिभ्यः मत्त म्यमानसि ।

जमनकः इव म्यपनय

म च न ममकर्मपुत्रादन ॥ ९४ ॥

वन्दु ममपुत्राणां

मृत्विचि विवेकतया च पादय ।

दिहकारि विरोधो वाभः

पुनर ममकर्मपुत्राणां विविच ॥ ९५ ॥

इदमप्युक्तं पुराणम् ॥ —

ममकर्मपुत्राणां विविच ॥

मूर्त्तयः सर्वेः ।

वत्तद्विपर्ययात्
विदधे नापु न भव्यं जगः ॥ १.६ ॥

शुचिनोऽपि कृपागुणान्प्रदान्
व्ययमच्छिप्रयनद्रुमां कुतः ।

दुःखान्पुनर्ययमक्षिप्तो—
स्त्रियमायामिकरेण धारणः ॥ १.७ ॥

मदनद्विपर्ययि नो जिते
स्मिन्तवृत्तं गुणपुष्टिमिच्छतः ।

यत् नम्य वरीरपायै—
ननु रीप्यांभृदियामयत्तनु ॥ १.८ ॥

कृत्विगजनामुन्नीयतां
दधदाप्यायदनुजिततादर ।

जिनराजमगलभूषणं
गुणदंभ्याचलंगं न मानसम् ॥ १.९ ॥

गजपुष्पमूर्त्तितोषित
जलमच्छे न निपातुमिच्छया ।

उपशान्तममृदुवर्द्धनं
विक्रगाहं गहनं जलादायम् ॥ १.१० ॥

नियमं कृशनागमक्षम
चरितुं गाढमुदम्य कर्हमम् ।

तनुवर्द्धनात् न दृष्टवान्
गजराज कृकयापुपन्नगः ॥ १.११ ॥

अभिपत्य न पूर्वया गया
नयनाभ्या विषवद्विमुद्धहन ।

विद्वंसं गतस्य मन्त्रसं

न नृसिंहस्य क्षयात्त्रिंशत् ॥ १०२ ॥

अस्यद्विष्णुस्त्वेष्य मर्कटी

मरणं पुत्रस्यस्य पञ्चमम् ।

निशपानं निशाल्य दृष्ट्वा

दृष्ट्वा तद्वपुः स्य पश्यते ॥ १०३ ॥

उपगत्य काली न पंचमं

नरके पौंड्रस्यस्यस्यस्यम् ।

अनुभाषयतामपचला

तत्प्रथमंशिवस्य दृष्ट्वा ॥ १०४ ॥

उपगत्य काली नृशिवस्य

मन्त्रिनस्यै वदन्त्या विष्णुस्यै ।

मगच्छन्त्यास्यस्यस्य

उपगत्य स्यस्य स्यस्य ॥ १०५ ॥

अस्यस्यस्य शिवस्यस्य

उपगत्य स्यस्यस्यस्यस्यस्य ।

नृशिवस्य स्यस्यस्यस्य

उपगत्य स्यस्यस्यस्यस्यस्य ॥ १०६ ॥

उपगत्य स्यस्य स्यस्यस्य

उपगत्य स्यस्यस्यस्यस्यस्य ।

उपगत्य स्यस्यस्यस्यस्यस्य

उपगत्य स्यस्यस्यस्यस्यस्य ॥ १०७ ॥

उपगत्य स्यस्य स्यस्यस्य

उपगत्य स्यस्यस्यस्यस्यस्य ।

तृतीयः सर्गः ।

अभवत् स पतिः स्वयंप्रभ—
प्रथिताप्यानचिमानसंपदाम् ॥ १०८ ॥

न मुहूर्त्तमप्रयौवनां
तनुमिद्धां शयनोपपादिताम् ।

अपहन्नवद्रीष्यपोडशा
भरणाभिपुतिपिडगर्भिताम् ॥ १०९ ॥

नवरत्नमरीचिमेचके
शयनीये न निषेदिवान् क्षणम् ।

प्रशुगन्धितरंगमंगिन—
स्तपनम्यानुनकार भास्वर. ॥ ११० ॥

न विमानगुहाह विनिस्सर -
न्नमर्द्दुदुमिनादबोधिते ।

जयकारनिर्झरिहमुगै
दंष्ट्रां सांजलिबंधमलकैः ॥ १११ ॥

अविरोच्य मरुत्तर्पाटिकां
अपितस्मन मुधया मुधाशर्त्त. ।

विदशाद्रितटम्य संदधे
धिर्यामिदुपुतिमध्ययसिन. ॥ ११२ ॥

निपतन्तु गुमायन्दिच्छलान्
न्ययमंथं प्रतिनूतनधिया ।

मयिल्लासमुदास्यन् ध्रुवं
धवलस्त्रिगधकटाक्षयदति ॥ ११३ ॥

पनितामुवचद्रमंडल—
क्षरदालोकस्यच्छरागृत्ते ।

तृतीयः सर्गः ।

दिग्मित्तयः स्फुटितो जनने समंताद्
गंभीरदुन्दुभिर्यैः स्फुटिता एषाम् ॥ १२० ॥

पश्यन् स धैर्यमिदं मदिचारचेताः
प्राप्यायधि भयनिमित्तमुपेत्य धात्रीम् ।

हेमारविदनियहंरविदमुभं—
रानयं तत्परणपातितरत्नमौलिः ॥ १२१ ॥

विविधकुसुमचर्मैः प्राच्यमभ्यर्च्य देहं
मपदि स्फुटवेदी स्वर्गमभ्युज्जगाम ।

मुकुटमणिमयूर्जमहिषप्रप्रकृटे—
ज्वामिदिलसदखंडामत्यंकोदण्डलहरीः ॥ १२२ ॥

आख्यां नशिप्रभ इति प्रथितां दधानो
देवः स शोणशानपत्रपलाशलेह्यः ।

मासाष्टकं सुरभिनिभ्यसितं कपूजितं
स्वर्गे यमौ चतुर्गवियपु'प्रमाण' ॥ १२३ ॥

भोक्ता पर्यसहस्रयोडशतया दिव्यामृतभ्यापार—
स्नोमालिगानलध्वरम्यपरमप्रीत्युद्गमधीनिधिः ।

तरुर्था दिव्ययधूकटाक्षनिपतन्नेप्रद्विनेपायली—
नित्यासेव्यमनोऽमूर्तिगुमना स्वर्गेऽद्विगण्योऽनं ॥ १२४ ॥

इति धीयादिगजमूर्तिवत्सवं धापाभ्रं त्रिनभश्चरिते
महाबाह्यं पञ्चयोपस्वर्गगमने नाम
तृतीयः सर्गः ।

चतुर्थः सर्गः ।



प्रवृद्धजंबूद्रुममुल्लंछन—

प्रभाषितद्वीपविशेषमध्यमः ।

निसर्गहेमच्छयिमंडलोदरः

स्थिरस्वभावोऽस्ति सुमेरुपर्यतः ॥ १ ॥

समंततो यः प्रभयावगाहते

नभःप्रदेशान्नपनीयेपिगया ।

जिनार्भकस्नानपथोरस्माप्सुतः

सदा विषाद्विष्णुरिवावतिष्ठते ॥ २ ॥

विभक्तिं यः स्वयंनिताविनर्त्तनं

नवस्यभावं सुरतालसंगतम् ।

गुहागृहेष्वप्सरसामपि व्रजं

प्रियांकशय्यासु रतालसं गतम् ॥ ३ ॥

पयोधरंघ्नंशितशुभदंशुका

विभक्तमूलागनहस्तविक्रिया ।

यधूरिव प्रेमवती दिनात्यये

यदंगमालिगति तारकावली ॥ ४ ॥

स्थिरप्रवृत्त्या जगति प्रतीयते

नितांतमाक्रांतमंरुत्पथोऽप्ययः ।

रसातलस्थोऽपि दिविस्पृगुच्चकैः

रविस्वभावोऽपि भुवर्णस्तंभयः ॥ ५ ॥

मुक्तावन् । २ देवानां तालेन गद्दिनं । ३ रतेनालगाभावं प्राप्तं
परो मेघं ननय । अशकं द्विरणा, अशुकं वृषं च । ५ व्यासाकाश
रिहारः । ६ अचल ।

चतुर्थः सर्गः ।

सुष्टुमच्छायसुरेणु गानुषु

श्रुमगीनं सुरसुंदरीगणम् ।

करोति यस्मिन् मणिरदिमभूषितं

गुणो हि नन्वेव रसायगाहिनः ॥ ६ ॥

अनोकदा यन्मलिष्टमशेखरा

नमोऽयकंपंत्यरणप्रभोऽमे ।

अनारतं विभ्रति पणंसंहतीः

श्रवालभायानतिर्यासिनीरिष ॥ ७ ॥

पतत्रिणां यत्र जलाशयोद्भयं

न पुंडरीकावृत्ति पांडुकंठयलम् ।

तनोति न धीजिनराजमञ्जनं

शिलानलं विभ्रति पांडुकंठयलम् ॥ ८ ॥

विवेकचारी विषयेषु मध्यमः

समलशाखाभृद्व्याप्तसत्यधः ।

प्रपद्य यः स्वप्नतया तनूभृतां

प्यनक्ति चिडानिय लब्धवर्षताम् ॥ ९ ॥

महीरहो दंतदर्भापुमंडल

श्रकाशिनश्यामगृहोदराश्रये ।

नितांतमंधंकरणं शरीरिणां

न यत्र रात्रावपि जूंभने तमः ॥ १० ॥

शकास्त्रि नित्यं विषयोऽस्य भूभृतः

पुगे विदेहे महनीर्यमवः ।

जिनेश्वरश्यामुवनिर्गतं यत्रो

यमाख्यया संसति पुष्कलायतीम् ॥ ११ ॥

उद्वृत्तं मंडयति स्वभूगुणं—

धिराय सीतासरितो निवामभूः ।

नभश्शरणां कुमुदातुनरुद्रि —

विभावि तस्मिन् विजयादेपयंतः ॥ १२ ॥

यदि विभोकोरग्नां दग्नां भूतः

स्मिन्कृताशिर्भयलो गुणो भवेत् ।

स्वरदिग्भिः प्रोत्थमितोपग्राह्यः

न तथा लीला भूतागुह्यहेतु विदेः ॥ १३ ॥

वदन्त तस्मिन् यतयर्गंगादिनां

समुत्थितोऽपानमनामविभक्तः ।

पूरुषा गोपायामनुष्याभिवृता

वर्तिन् यत सन्तु विजयारिमात् ॥ १४ ॥

अमुःपूरुषाः स्यादसीदिमद्वनी

विजयासीमपाय स्मिन्पुष्टवरे ।

यत्र निरीच जाय तथा न परयतो

न विभाय न स्वरदीर्घा विभक्तः ॥ १५ ॥

अन्यथाऽतः शरणादिद्विपयया

पूरुषाव न दीर्घानि दीर्घादिपयाम् ।

इत्येव वासिष्ठीयैव वादुः

मिन् यथाय यथायवन्तः ॥ १६ ॥

अथ च तं तथा यथाय गोपाया

अमुःपूरुषाः स्यादसीदिमद्वनी ।

इत्येव वासिष्ठीयैव वादुः

मिन् यथाय यथायवन्तः ॥ १७ ॥

अथ च तं तथा यथाय गोपाया

अमुःपूरुषाः स्यादसीदिमद्वनी ।

अनुप्रासः इति ।

अनेकेषां प्राणस्यार्थं मंदं
सुप्राणस्येव विमानि भुवि नम् ॥ १८ ॥

अत्रिय नमामासं गच्छतिः
बद्धं यामासं यन्ती नमधरा ।

त्रिषोऽस्य तां भुवि प्राणासुदी
न नममासि गच्छति नमम् ॥ १९ ॥

न धीयतोऽनेव पत्रप्रमासुद--
अगण्यदायादिविदाहवेदना ।

विद्वन् प्राणासुदगुर्वेदुमंडल--
सुदाधोऽगच्छति नमम् ॥ २० ॥

इति प्राणासुदगुर्वेदुमंडल
बंधुय पुत्र नमभगं विद्वतो ।

न ये नमाम्यांति इति प्रमासं
द्विष्यन्तोऽप्यास्य यतः नमामम् ॥ २१ ॥

न जानमासो यदप्यापि यान्वितो
अथेन विधान गुणदिसमिगुर्वी ।

नतः नमाम्यायत नदिसंवेग-
यमित्यथा बंधुनेन बंधुम् ॥ २२ ॥

न मुग्धगुल्लोऽदितपाजिपंकजः
नमामनिर्जलतमा नयोदय ।

नितु रविषो गिग्दोर्गिग्वितो
अथन नित्यं सुखचाग्नि स्वमान ॥ २३ ॥

नितुः शयलेन मुग्धे न ग्येनित
सुविमिताविदेशनानुनिर्गमि ।

अनविनोपस्थितचंद्रिकां ज्ञान
वियत्यविद्याविद्यि व्यसोधयन् ॥ २४ ॥

अनविनोपस्थितचंद्रिकां ज्ञानाय । २. मुग्धा गोदोली विद्याय ।

हस्तिमन्त्रिणं भगवन्मुद्रया हण-
 प्रीतिभ्यामप्यविरोधतेजसः ।
 गृहेषु यथाभितपोऽप्योषिणां
 हस्तिं च गभीं गुरुचोऽप्यदिपाम् ॥ १३ ॥
 मयाऽपि गगं जलमन्त्रिणां प्रिये—
 नेत्रयुगौ यत्र विहितं केचनम् ।
 यदपि धीमन्त्रिणो विनाकिनः
 आशयतिने विनाकिनः सद्युज्ज्वलम् ॥ १४ ॥
 वृद्धिभवासा मन्त्रिणमन्त्रिणम्
 विद्वान् यत्र विद्वान्मन्त्रिणोऽप्येते ।
 यदा च यथा मयाऽपि विद्वान्
 भुवन्मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १५ ॥
 वृद्धिभवासा यदपि मन्त्रिणो
 विद्वान्मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ।
 मयाऽपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १६ ॥
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ।
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १७ ॥
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ।
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १८ ॥

१. हस्तिमन्त्रिणं भगवन्मुद्रया हण-
 प्रीतिभ्यामप्यविरोधतेजसः ।
 २. गृहेषु यथाभितपोऽप्योषिणां
 हस्तिं च गभीं गुरुचोऽप्यदिपाम् ॥ १३ ॥
 ३. मयाऽपि गगं जलमन्त्रिणां प्रिये—
 नेत्रयुगौ यत्र विहितं केचनम् ।
 ४. यदपि धीमन्त्रिणो विनाकिनः
 आशयतिने विनाकिनः सद्युज्ज्वलम् ॥ १४ ॥
 ५. वृद्धिभवासा मन्त्रिणमन्त्रिणम्
 विद्वान् यत्र विद्वान्मन्त्रिणोऽप्येते ।
 ६. यदा च यथा मयाऽपि विद्वान्
 भुवन्मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १५ ॥
 ७. वृद्धिभवासा यदपि मन्त्रिणो
 विद्वान्मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ।
 ८. मयाऽपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १६ ॥
 ९. यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ।
 १०. यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १७ ॥
 ११. यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ।
 १२. यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम्
 यदपि मन्त्रिणोऽप्यदिपाम् ॥ १८ ॥

चतुर्थः सर्गः ।

तदेव यं ममदि पञ्चवीर्यं र-
त्युदाहरंति भुवत्सर्ववेदिनः ॥ ६८ ॥

अयुष्यत स्वप्नमपि प्रजाहिते
प्रवृद्धरोषोऽपि ररक्ष म समाम् ।
न भूयन्माऽमिन्यलितोऽपि तेजसा
प्रजाघनम्नेदगुणं ध्यलीनयत् ॥ ६९ ॥

प्रमूलदानः स मदान्यपाहने
बभूव नक्षत्रतया विनाऽमिजित् ।
अहीनवृत्तिर्विजहा द्विजिहवां
विना स्वयंशम्य विषादिता जले ॥ ७० ॥

यशस्यकामं स जहत् भुजंगता-
मपि स्वधारी पुभुजं भुजं गताम् ।
प्रजासु चक्रे कृपया स बंधुतां
कल्पवृद्धया विहितोत्सवं धुताम् ॥ ७१ ॥

स यावदंनं निजकीर्तिमामिनी-
प्रवेशदानादिव नुष्टमानसः ।

यत्नोऽमृताप्रायनदननृत्तिका-
क्षकार तृणा रविपदिमिदिशः ॥ ७२ ॥

निसर्गसेव्ये नृपतां महागुणाः
स्थितिं गतास्तत्र यद्दुर्दुत्तम् ।

जनस्य दूरैष मनोऽपि धेतति
स्थितानुपागप्रसथस्य धीजताम् ॥ ७३ ॥

उपाधिनक्षेमविधानदीक्षितो
गुर्णगुणहोऽयममूल्यवृष्टिभिः ।

तया नु मीनव्यज्रमत्पताकया

सलीलमुद्यच्छकरानुरूपयोः ।

गुणेन संघातभृतोर्न जंघयो—

मैनम्सु न व्यजन माद्यु पश्यताम् ॥ ८७ ॥

करेणुकांताकरवृत्तपीथरां

मृगीदृगुरू हि गुरू पराजिनौ ।

प्रदीप्तम्पस्मग्मंश्रयाविव

व्यमामिषानां नवचर्पकच्छवी ॥ ८८ ॥

अनेकपत्रोद्धिखितायतां जरा

गुणं नदृवोरिव जेतुमक्षमा ।

धनस्थिति काचिदयाद्विलज्जया

विग्न्य रभाम्बितराभ्मरोगता ॥ ८९ ॥

मनोरमां पुष्टिमज्जमाक्लिपन्

स योयनौ नूतनरत्नमेखलाम् ।

चकार मारालयनित्यसग्निधि-

प्रसंगलीलां मुडतीकटीतटः ॥ ९० ॥

विकीर्णरत्नांशुनिरस्तदुस्तमः-

प्रपंचकांचीविभवो विनिर्यर्भा ।

बृहन्निनंय सुतभोस्तनूभृतां

न दक्षिणाशाविषयो जनाश्रयः ॥ ९१ ॥

तनोतु भारोभयपार्श्वयर्तिनो

मियेय भूयः स्वविरोधिनो गुणान् ।

चिराय मध्यस्यतयापि पप्रथे

गुणाननिघ्नन् कृशिता मृगीदृशः ॥ ९२ ॥

विमुच्य संभूय सुवर्णहोरिणं

नितंषमुशंपंतिमिनंतघ्नयः ।

चतुर्थः सर्गः ।

न मध्यदेशो रजधे न यधिरं
भवेन् कृशावस्य फले तदीदृशाम् ॥ ९३ ॥

सुपृथमुक्तामयतां स्वसंगिनो
गुणेन दारस्य समृद्धिमोजसा ।

प्रयोजयन्तापयि गाधु मुञ्चुषः
कथं न्यभूतामरिषेकिनौ स्तनौ ॥ ९४ ॥

समप्रभूभृन्मणिमुक्तरागमा -
धमेदधृती पृथुलधमंडली ।

स्मरस्य मूर्त्तौ नयविक्रमाविष
स्तनौ तदीयाधुचिनं यदुद्धती ॥ ९५ ॥

तदीयमौदर्यविनोपरिमित
स्मरेण रागो रनये विनोदितः ।

प्रकल्प्य मूल्यं नयपहपधियं
धर्ती मृगास्याः कामप्रदीह धुवम् ॥ ९६ ॥

भृशं कृशांग्याः वरजायतांशुदै -
नं केतकीमूचिर्गमंभ्रं पंचमि ।

चिराय जेतो मदनो मदीभुज -
स्तदादि यंत्रे किल पंचयापताम् ॥ ९७ ॥

न्यधत्त रज्जुतिजालमांमले
वरट्टुमस्वंधममाधये यधुः ।

मनोज्ञलापण्यपयोनिषेकिने
कृतालवाले धलयर्भुजालते ॥ ९८ ॥

निगृह्यमंगरमृतान्मर्कपेषु
द्वितीयादिदोरिष मुंडरीमुखम् ।

किमत्र निषं यदि तेन लीलय
 विजित्यिरे पंकजसंधयाः धियः ॥ ९९ ॥
 समुद्रमालकांतिमयांयुस्मंभूते
 मुग्धापदेवो कमलाकरो भुवाम् ।
 परम्पराभिद्रुतहामीगयो -
 मंगधुयो जहनुगीशणे धियम् ॥ १०० ॥
 अपांगारधमीर्मुणपन्नमंजनी
 विधिययुक्ताकृतित्विणहादिणी ।
 मरुत्तनीयामदयणेतमर्गा
 बभूव मयाः धयणानुयर्तिनी ॥ १०१ ॥
 इयत्त त्रिमन मुणपन्नमीम्भे
 मया कम्पामाशिवाः क्विदु विधी ।
 मयापि पर्युदुदयंगमोऽभवत्
 मदीय मुग्धास्वनागिकारिविधिः ॥ १०२ ॥
 मया निरुद्धाऽपि विजुयया द्विजे-
 वरुद्रमयो दृष्टिणागमादराः ।
 हस्त प्रवात्प्रियममनिर्देय
 नृपण निर्ये निर्ये कानावरा ॥ १०३ ॥
 ज्वरगिरिद्रुमून गिरादरा
 निरुद्रम नृप-दमावदेविन ।
 निरुद्रमदय मम ध्वनावरा
 मनुजमम प्रमदेवपावरा ॥ १०४ ॥
 मया मूर्धं वासदरा आदीर्दिने
 दिवादिने निरुद्रमोऽपि नृपून ।
 अथैव धीमनुद्रमनृपानी
 कृता द्वि कृतीने इवाकृपिगानी ॥ १०५ ॥

चतुर्थः सर्गः ।

गृहीतपूर्वस्त्रियतिकां महीभूत—
सतीमिपानुञ्जितप्लामंडनाम् ।

उपाल्प कान्तामुदयार्थमकं वद
दियः स देवः धनद्रीधितिप्रभः ॥ १०६ ॥

जगज्जिगीषोर्जटरादाये शिशोः
ममाम् प्रवृत्तां दियसेष्यनाशुलम् ।

मित्येष तस्मादनुयस्ववृत्तिभि—
विमुक्तमामीद् घलिभिर्यधूदरम् ॥ १०७ ॥

अत्रण्डभूमंडलरक्षणशम—
प्रभायमंतर्दधती तममंकम् ।

प्रकृदहयैव जहे मदीजसं
निजोदरक्षामतया नितंबिनी ॥ १०८ ॥

निपीददंगेष्वथ गर्भशापिनः
शिशोर्गुणानामिव भूरिगौरम् ।

अमिष्यनक्ति स गजेंद्रगामिनी
पिनोदलीलास्वलसेन कर्मणा ॥ १०९ ॥

सखीप्रकोष्ठं प्रतिगृह्य गर्भिणी
कथंचिदुत्थाय कृतांजलिक्रियाम् ।

नृपः कृपाहर्षविमिथया ददा
गृहागतो धी क्षणमक्षत म्रियाम् ॥ ११० ॥

उदूढगर्भा दयितां प्रजापति—
निधानगर्भामिव भूतधारिणीम् ।

अनेकविद्याजपहोमकर्मभि—
विमक्तः स्यादधिरन्वयवर्तन ॥ १११ ॥

प्रवर्तिता पुंसवनादिषु क्रमात्
 स विक्रमी दोहलमेदमाहितः ।
 प्रपृच्छथ शृण्वन् मुदशः सखीजना—
 ज्जहर्ष सत्पुत्रविनिर्णयावहम् ॥ ११२ ॥
 स्फुरत्प्रभामंडलमध्यवर्तिना
 विजित्य चक्रेण दिशां विशापतीन् ।
 स्वपादमूलानतमौलिमस्तकान्
 व्यर्धात् सदुत्साहवती सती सती ॥ ११३ ॥
 नवापि सा पीनपयोधरा वधू —
 निर्धान्विधेयान प्रविधाय धामभिः ।
 वभूव युक्ता भुवनस्य तद्गने
 र्धनाभिलाषग्रहनिग्रहेच्छया ॥ ११४ ॥
 प्रभावभूयांसमपाशुलच्छवि
 महीशमालागुणरुढमुग्रतम्
 अजीजनत् सृनुमिलापने प्रिया
 त्वनेर्धरित्रीय विनिर्मलं मणिम् ॥ ११५ ॥
 र्धेगियास्यागित्दिक्प्रभायिनो
 नित्येव धासो भृशमुल्लसिष्यत ।
 प्रसृतिकाले कृतिनां नयग्रहं
 शुभेनगायस्थितिरभ्यमुष्यत ॥ ११६ ॥
 उदीर्षतेजः प्रसरेण साक्षिणा
 करग्रहेणोपतिभायिनं पतिम् ।
 तर्माभ्वर दृष्टुमिशोदित दिशो
 निरागुंभोदपदाभियेष्टम् ॥ ११७ ॥
 दिक्स्वगोद्यानलगायितनंतः
 कृतात्मगोमृष्टिःकृष्टभूजाः ।

चतुर्थः सर्गः ।

मण्डप सिन्धुनिधे देहिनिः शनै—
येयौ तदानन्दस्मुदनीकरैः ॥ ११८ ॥

स्वयंप्रभाषोपनतास्तमोपहा
नृपेद्रधिषा इय रत्नदीपिकाः ।

परीत्य नं पुण्यनिधिं चतुर्विधाः
शिखरामयुखोद्दिशिनांवरं यमुः ॥ ११९ ॥

कृत्वादिर्वेनालिकनिभ्यनस्तथा
दियः पतंती वुसुमायली तदा ।

व्यधादनाघ्रातं चरेण हारिणा
जनस्य गंधेन यमुंघरातलम् ॥ १२० ॥

निशाम्यमानेन विवृत्य दिग्गजैः
क्षणं समुत्तमितकर्णपहृषैः ।

गर्भारदांमध्यनिनाभिचुंबितं
तदांवरं शब्देगुणं व्यजुंभत ॥ १२१ ॥

मुखेन ह्यसंमृतयिदुयपिणा
निवेदितार्थं पुनरुक्तया गिरा ।

इदं भुजिष्या समुपेत्य सत्यं
नरेन्द्रमास्थानगतं व्यजिज्ञपत् ॥ १२२ ॥

व्यपाचि गुह्येन जनस्य कर्मणा
तथाभिमेवारसवेदिनोऽधुना ।

अर्माष्ट पुत्रं सदभिष्टुतं गुणे—
यंदद्य पृथ्वीभ्वर भटंदारिका ॥ १२३ ॥

भुजेन पूर्वं यद्वतस्तयोर्धरां
महाययानित्यभयप्र यद् यचः ।

१ पूर्वमनाघ्रातेन । २ शब्दो गुणो यस्य । ३ दास्या । ४ गुणेन । ५
जनकुलम् ।

स्रमद्विरेफप्रकरायगुंठितो
 व्यधत्त साक्षादिव मेघदुर्दिनम् ॥ १३७ ॥
 मदांधमायहा महागजं नृपः
 प्रयन् स वीचिष्विभयूधवेष्टितम् ।
 प्रभुर्वितस्तार कृतस्तयो जनै—
 जैनप्रियामंयत्कृष्टिमंघरात् ॥ १३८ ॥
 क्षितिपतिमयलोक्य प्रौढहर्षातिभारा
 हयपुग्नुपधीधौ मौधदंंगाधिरूढाः ।
 अतिमधुरमगायभंगनाः काञ्चिद्व्याः ।
 ननुरगृतयीर्षीमीभणैधिंक्षिपंत्यः ॥ १३९ ॥
 शुभदिनममयाये लज्जशुद्धायमार्यै—
 रधिगतनयमार्गैर्वैर्गृह्येद्य साधम् ।
 अभिमतमनिर्गम्य प्रीणयन्प्राणियते
 तनयमकृत नाद्या यमनाभ न भूपः ॥ १४० ॥
 पद्माभोगरभशमस्य वितर्ते. पत्रंनारुलादिन-
 स्नस्योर्षीभ्य विक्राममुत्कृतया निगमांशुधामाधपम् ।
 दृष्ट्यापागनिषिष्ट्यकृतया तर्गांगमाकांक्षिणी
 तर्कां पुण्यतरीददस्य सकला लक्ष्मीस्सगोत्राधया ॥ १४१ ॥
 मूलोकाधिपतदनस्य जगतानशास्त्रयोप्यादिनः ।
 प्राप्तस्य प्रशुभानुगागनिचयानुषं. प्रभेनोदिशम् ।
 स्यातोमध्वर्मादिप्रभुनधिभेत्तातस्य चानुधिषया
 बालक्येध निगाकस्य जगता सक. प्रणामांशुदिः ॥ १४२ ॥
 १५५ धीपादिना प्रभुर्मा ॥ १५५ ॥ १५५ ॥ १५५ ॥ १५५ ॥
 १५५ ॥ १५५ ॥ १५५ ॥ १५५ ॥ १५५ ॥

पंचमः सर्गः ।



विजयातनयः स वर्धमानः
सह बंधुप्रमदेन तन्मुखधीः ।
निजपुष्टिविदिग्मयेव पथाद्
गुणमुख्यैः तनुबंधिभिः सिषेवे ॥ १ ॥
चिनिद्वद्धतमस्सु तेन भूयः
कमलानंदकरेण भास्वतेव ।
घनशीघिरियासिद्धासु दिधु
प्रचकास जननी नवोदयेन ॥ २ ॥
अपि पथ्यग्नमुञ्जप्रजाना
मुपसेयाफालदः स शोपहारी ।
अभयन्महतः शयम्य हेतु -
द्विपतां दयमचितनीयशक्तिः ॥ ३ ॥
गुणप्रत्यतिप्रसाधुसंधि
प्रथमोदीरितवृद्धिभावमुद्धम् ।
प्रथतः पितुराश्रयाऽध्यगीष्ट
स्वममं व्याकरणं सवृत्तचाल ॥ ४ ॥
प्रतिबोधकचिन्नदर्शनंगे
पत्निना तेन कृते मदोदयेऽपि ।
विषया विजगाद्विरे हर्षक -
द्विपनादने यथामते नदीयः ॥ ५ ॥
दृष्टिमानिविष्टं नदंगसंधि -
प्यनुपप्रप्रनुत्तीषिभिर्षयस्यैः ।
अजनिष्ट दुरत्ययो गुणानां
कल्पसा न विना प्रधानमेवाम् ॥ ६ ॥

चतसृष्वयमुद्यमादधीती
 नृपविद्यासु निरूढसंप्रदायः ।
 विजहे निजवाल्याकेन सूनु—
 रयथाकाममवस्थयेव रामः ॥ ७ ॥
 विकसन्मुखचंद्रकांतिकाश—
 च्छविर्धातांबरचुंबिहंसमुद्रम् ।
 न शरत्समयस्य मन्मरीच
 प्रतिजग्राह वपुः स यौवनश्रीः ॥ ८ ॥
 परिघायतवाद्दुर्धवार
 कृशमध्यं नृतिमदविशालवक्षः ।
 अजनद्विपतां भिये विचित्रं
 यपुग्ध्याजमनोहरं तदीयम् ॥ ९ ॥
 विकचांबुजहारचक्रचिह्नं
 दधदोजः स्थिरमीमनिष्ठमभ्यम् ।
 कमलाकरतामिवाचचक्षे
 विलम्ब्याणितलं नृपात्मजस्य ॥ १० ॥
 अधिराजगमागहंति नृचद—
 विनयध्रारचिरेण यज्ञनाभः ।
 मययोर्भिरमामहंति त्वां द्व
 गुरुचिन्त्रानुनये क्रमेण लेभे ॥ ११ ॥
 महितो धरमंगोऽद्रदिष्टा
 रगधाराभगितो विधेकहेतुः ।
 न हि तस्य पर करे कृपाण
 कमलोद्गाविति त्रिवंशं मुखेऽपि ॥ १२ ॥

अग्निर्नीलकण्ठिनादंगपीठ—

स्वयन्वीषा परहाप्रवेनादशा ।

नयतस्त्वयिदं न ह्यन एष

दिलम्बन्तुं नलता कर्षेऽपि तस्य ॥ १३ ॥

शुणक्तोऽप्यनेण रुदिमाजा

दितयन्मप्रतिपंचिमंचनेन ।

कलिनं न स्वपातिमेष यज्ञे

दृढधर्मेण मनोऽपि धर्मज्ञेना ॥ १४ ॥

पल्लमभिममुदंमदीयो

शुणयोगकमभापनामिनुप्रः ।

कणयः प्रतिपिष्यति स्म नृपं

त्रिपुराज्ञस्यमनांसि च प्रभायः ॥ १५ ॥

शाक्यपि स्वयंदाजीयमुञ्च

यंलमुर्त्वात्वा काप्रद्रेज यज्ञे ।

यग्वायुं कर्मदले न विद्या—

मनुर्जीलप्रथ किः पुनर्जिगीषुः ॥ १६ ॥

नक्षयौवनसंभृतांगयष्टि

कृतविद्याधिगमं तमुपवेशाम् ।

तनयाः स्वयमेव निग्युर्ग्य

बुचकुंमोहहनातिरिप्रमथाः ॥ १७ ॥

यदनेऽधरपानलिप्सयेव

प्रतिलसं शरदिदुषिषकाने ।

परहाप्सेयूखमंडलेन

स्तनयो संनिहितं युयुत्सयेव ॥ १८ ॥

कनकांगदृष्टंरत्नां यबंध
 स्वलितात्मानमिव स्थितं च शक्तोः ।
 नखरद्युतिनिर्गमच्छलेन
 प्रचुरं पाणितलादिव क्षरंतम् ॥ १९ ॥
 श्रयसोरिव दीर्घलोचनाभ्यां
 धयलापांगरुचा निविद्यमानाम् ।
 तनुजन्मतयेय मुग्धवृत्ति
 स्थिरमाकृष्टा निघिष्टमंसदेशे ॥ २० ॥
 निकटस्थगर्भारनाभिकुपं
 नमदमं यलितं कृशिक्षि मगाम् ।
 न निपातमयंत्य मध्यदेशं
 कृणयेथ स्थगयतमुत्संतम् ॥ २१ ॥
 मगृणं महद्वरायकजं
 गुरगिंधोरिव गंकतं गरीयः ।
 रमणीयतयेय गोपभोगं
 जयनं मरुच्छदितात्मलाजंतम् ॥ २२ ॥
 तरुणी परिणीय ताः स भोगी
 वृषु लापण्यमय गुण वधानाः ।
 मदन समुपार्धित पुताय
 प्रकृतिस्तथा हि गार्धिताभिप्राता ॥ २३ ॥
 सच्चिवर्गनिषिद्य यौधराये
 मनय यमंहर विनाय राजा ।
 निरमुद्रहनादिपानिगिराभो
 निरर्था तत्र पुरे यमंभरायाः ॥ २४ ॥
 अविहाय मरीतामाधपंती
 युवराजं विश्वराम रागयन्पतीः ।

महर्षोर्गमिषाऽप्यगाहमाना
सुरभिर्षाः स्वविकारमर्षेद्वनभ्या ॥ २५ ॥

अधिरागनर्थापनाभ्यतिदे—
सृष्टमृतोः क्रमतो दिदधयेष ।

प्रुतपमनमुपागदन् यथाशये
प्रत्ययोपायनमप्रदानपूर्वम् ॥ २६ ॥

अथशुष्य निजाल्यये विशादाद्
रुदितायाः शरदो हिमागमाद्दी ।

भृशमधुलपंग्वि प्रत्यये
हिमापिदुप्रकारेपियत्यपारे ॥ २७ ॥

शरदः सुहृदो लयेन संज्ञा
चलितायाः सुतगं मयालपंकेः ।

धुतपक्षानिनिविरीयमाणं
सुदिनं मूलमियांवरं न्यरंत्मीम् ॥ ५८ ॥

हिमदीनलपातमनिपाता
दिय भीत्या मरुयमेविजीर्णपरीः ।

यसुधाप्रदगेदरेषु चके
तदनायाः प्रविमुच्य मश्रिवेदाः ॥ २९ ॥

समये हिमवर्षिणि स्वहेति—
प्रभवम्लानिमपादिषांगजाग्मा ।

अमनागविदान्मनःकुटीरं
सुयराजस्य पुरे कृशोदरीणाम् ॥ ३० ॥

ठिदि दिदयुपचयमानमूर्ति—
सृष्टमृतोर्ग्वि शशुर्भानचिर्षः ।

शिशिरः स हिमनुरेव जने
 विरहस्त्रीहृदयप्रकंपकाग्रे ॥ ३१ ॥
 इतरेतरकुट्टनकृपाङ्गि—
 हंशनः सत्रमुजस्म शीतकंपाः ।
 ज्वलदग्निसदः प्रधानभङ्गा—
 मविशान् कपेटिनः सवेगमने ॥ ३२ ॥
 निशि निम्नतया हिमं निर्पीय
 प्रचुरं प्रातरिदं वपुष्यजीर्णम् ।
 अथमग्निव चतुलस्यवीर्यं
 प्रमथच्छन्नतया मधूकवृक्षाः ॥ ३३ ॥
 सवयोविकृताः स्वपत्रनेत्रे—
 स्तुहिनांशुप्रनुग्वाथ तीरवृक्षाः ।
 भृशमन्वशुदग्निवाग्मनीने
 हिममग्नं कमलाकरं प्रभाते ॥ ३४ ॥
 शिशिरांगतया करीपजाग्रे
 सह धर्मः परिवृत्य गोपाङ्गिभाः ।
 व्युदतप्लवत मंत्रमाये थाहन्
 दिव्यमादां नगराद् बहिस्माज्जग्या ॥ ३५ ॥
 यनिताजनमाननात्यदालं
 प्रणुदन् शीतनिवाशु पणंजालम् ।
 प्रथमेऽहनि देहकान्तिहारी
 पथमानः प्रथया मधूकगंधिः ॥ ३६ ॥
 अग्निद्विष्णुविद्वेषितुं नलिन्याः
 किल तन्कालदशागतं निष्कारम् ।

विनिर्वाण्य निजप्रतापनेत्रं
 सुपथं धर्मद्विपानेषु प्रवर्षये ॥ ३७ ॥
 निजनिर्वाण्येव माधुरीये
 प्रविशन्प्रतापमाधितायवाताम् ।
 वनितानाममंशेषु नक्षत्रं
 शयनप्रदायणेषु खाद्यमुपजा ॥ ३८ ॥
 शुलभस्ततस्तदा सुखादोषा
 दृग्गणधंवाधप्रदांसुगानि ।
 नक्षत्रं चान्विषयवन्तु तानं
 प्रदर्शयन्सुखसुखेषु वनिष्कण्डः ॥ ३९ ॥
 मणिर्दीपितर्दीपिकाप्रकाश
 निजि जालागमविश्वरूपमये ।
 पितृपितृभक्तं भक्तुदत्तया
 सुनिजे नान्मृते वरदेमनिर्वा ॥ ४० ॥
 अथनेतिनमात्ततीसुगंधि
 धिगत्तसु सुमपंकदिरभ्यगात्रः ।
 धनितानुजपंजरोपगृहो
 सुपराजदिनादिभ्य न निर्धिषेदा ॥ ४१ ॥ सुलभम् ॥
 कस्तुना समयेन जेन तीमा—
 दिव्य शस्त्राधिपंनेदनप्रभाषाम् ।
 विजते धारयं दिशामंशय
 कृतपचालयंयमथक्षयेण ॥ ४२ ॥
 निशितम्लकण्डविशुधानां
 न विधाना क तु धर्तने दुरात्मा ।

पदुहोक्तिरुक्तिरिति संतो
 यनमिग्यान्वयीय संप्रविष्टः ॥ ४२ ॥
 अनुसंगकृतः सुसंविगृह्ये
 सुसंमेलन्य तथेन संगमेन ।
 प्रभवत यनप्राप्यः साधुणा
 सुसंगतोऽथ सुसंगतकर्मणाः ॥ ४३ ॥
 सुसंगतकर्मणांसाय संतो—
 सिय भूमीतनासंगतस्वनीयेः ।
 साधुना विविताविंसाधुधी—
 कर्तनियमपयिपानिकामु ॥ ४४ ॥
 विदुषु विदुषि विदुषा
 कर्तिका कृतवतामनुप्रमाणाम् ।
 साधुविदुषु यनसाधुद्वया
 सुसंगतोऽथ सुसंगतकर्मणाः ॥ ४५ ॥
 कर्तिकाकृतनोमसा मकृत
 मकृतकर्मोऽथ सुसंगतकर्मणाः ।
 साधुषु साधुविदुषांसाधुधी—
 सिय साधुषु विदुषांसाधुधी ॥ ४६ ॥
 साधुषु साधुविदुषांसाधुधी
 सिय सुसंगतकर्मणांसाधुधी ।
 सुसंगतकर्मणांसाधुधी
 साधु साधुविदुषांसाधुधी ॥ ४७ ॥
 साधुषु साधुविदुषांसाधुधी
 सुसंगतकर्मणांसाधुधी ॥ ४८ ॥

सदस्यः शिवायुर्वीर्यमाया —

एतस्य तस्मिन् शरणात् सन्निवृत्तमायम् ॥ ५१ ॥

विश्रित्वापुत्रिणां शिवायुर्वीर्यमाया —

विश्रित्वापुत्रिणां शिवायुर्वीर्यमायम् ।

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया ॥ ५२ ॥

शुभ्रान्निवृत्तानामाश्रयमाया —

शुभ्रान्निवृत्तानामाश्रयमाया ।

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया ॥ ५३ ॥

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया ।

विश्रित्वापुत्रिणां शिवायुर्वीर्यमाया

विश्रित्वापुत्रिणां शिवायुर्वीर्यमाया ॥ ५४ ॥

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया ।

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया ॥ ५५ ॥

शुभ्रान्निवृत्तानामाश्रयमाया —

शुभ्रान्निवृत्तानामाश्रयमाया ।

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया ॥ ५६ ॥

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया

एतस्यः शिवायुर्वीर्यमाया ।

मधुरैरनुगातिभिः गिषेवे
 ननु मन्त्रं मुक्तं समानशीतैः ॥ ५९ ॥
 शान्ता दित्तं विद्योतिनीना
 शिष्य कान्तादिभ्यश्चमलिकानाम् ।
 विज्ञि दिव्यगुणविशिष्टं मन्त्रं—
 मन्त्रविज्ञानमिष्य प्रमूढपुंसम् ॥ ५९ ॥
 यस्याप्यहर्षिपुत्रतान
 यस्याप्यहोमपिज्ञानिमायकता ।
 दृष्टिलम्बार्षिद्विपुष्टिभ्ये—
 त्यनयान भूतिमपि पापपुङ्गवैः ॥ ५९ ॥
 मन्त्रमन्त्रमनोयतीतनामा —
 प्रसाधामोदनि मन्त्रमोक्षपुष्टि ।
 यन्तर्तानपुत्रम सायमव
 मन्त्रिनीत समपुत्रा यज्ञनामा ॥ ५९ ॥
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र
 यन्तर्तानमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्र ।
 मन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र ॥ ५९ ॥
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र ।
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र ॥ ५९ ॥
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र ।
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र ॥ ५९ ॥
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र
 मन्त्रमोक्षमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्रमन्त्र ॥ ५९ ॥

मृदुर्वापने कनागकाया
 कनसौग प्रकृतं नृ यमैकान्ते ।
 विहरी मातं न मापतिवा
 दिगितं मंडनानिहंगुपानि ॥ ६२ ॥
 सुभेदिनिसंमंडकतेतो—
 विगते नृ. ग. मियाधिबः दधानैः ।
 जगते यनबोविदिने मीनं
 न पुनकतसमपागमापमानय ॥ ६३ ॥
 विविषदमनादुपानि यम्
 मसदोदमननांनपादकानि ।
 विनिवृधगनग्य दूर्गदिसयो
 मपुगाजग्य यमूनि वेदानीयाम् ॥ ६४ ॥
 नपतापनिषेद मीगृह्य
 मजतिरंग्विपिनांभवारिनेषु ।
 विमम्य यमप्रभापमग्युः
 वृमुग्यागाधमहाददेपुः मयः ॥ ६५ ॥
 अतिदीपेपथसमादिषाके
 पमिग्यापु पियत्यंनपदिग्यः ।
 ध्वितिरिष भानुयमं दिव्या
 कनिदप्यंपुर्धमिनिगोवभूये ॥ ६६ ॥
 रसदून्यतया विदारिताम्या
 यदनोनांनरजोयितानभृष्टाः ।
 अभयन ककुभो निदायमहाः
 यधि राक्षस्य इयामुमदिभीर्य ॥ ६७ ॥

विरमाः पुरुषभृगः मशोपाः
 पयिकीत्रेगहृलो निरुदनायाः ।
 तन्निरे मरिःत्रैत्रैत्रैत्रायाम्
 शुभिमाम्भ्य लया इयांगत्तया ॥ १८ ॥
 ब्रह्मोपियत्तपूडिगाददिभ्या
 ब्रह्म काभन संभिता विरेतुः ।
 तरकेषिन् तायनो विपुत्राय
 ब्रह्मिन्तर श्रितितप्रयाददत्ताः ॥ १९ ॥
 धनितानयतामिदामादीन्
 शुभ-रायार्थाय वापनो वनीयाः ।
 श्रीमदाय न त्वात्त एव ब्रह्म
 प्रोचामुन्मयांण यन वयाप्रिणीत्या ॥ २० ॥
 त्वादिभ्य सुवृ भन्माल्यवीर्षी
 ब्रह्म-वर्षिभनानुनायवनाम् ।
 वसुःशर्मिर्वागोदयै मरिष्य
 दनममयनवदमुकृता ॥ २१ ॥
 पश्यन्तस्त्वा ॥ २२ ॥
 तन्-तया भावित्वापन निर्दिष्टायम् ।
 श्रीम-नन्-दृष्टमयवन्म
 मरिष्य-सुवृत्तया ॥ भाविपत्रा ॥ २३ ॥
 त्वादिभ्य इव ब्रह्म-वर्षिभनानुनायवनाम्
 वृत्तमयवनापनाना ब्रह्म ।
 श्रीम-दृष्टमयवन्म
 इव भाविपत्रा ॥ २४ ॥

विष्णोषु विहंसिते विष्णो
 वात्सल्यपूर्व्यात् आनुमात्रताये ।
 निम्नसङ्ग निदेशे हीनप्रथमे ।
 प्रतिपत्ताये च समाजलेषु ॥ ७४ ॥

अपलं विनयमनुनिजामा -
 मयूनायाविष्य हरिमिः प्रपूजे ।
 नृपुभंगममानुसुनाया -
 मयिनिष्टमजिह्वयंगमोटे ॥ ७५ ॥

विविधीकृतिसंभ्रंशतयंत्र--
 एतुनधारादिनिर्गमसां निषाने ।
 मयूनायाविष्ययतीषु परपन
 परिसृष्टि मयसीतिवक्रताताम् ॥ ७६ ॥

हरिचंदनदिग्धदिग्धमूर्ति-
 विपुलोरस्थगितो महावपुष्टिः ।
 विगृहान् वापादयेन वाता-
 बुधकुंभा मदहनित्तमंशीर्ता ॥ ७७ ॥

मधुरप्यतिपेनमं विपंशी-
 गुणकृष्टिप्रभयं नृपस्य पुत्रः ।
 धयसोगवतंसयप्रयच्छ -
 य निदापस्य निजांतिकप्रवेशम् ॥ ७८ ॥

निजसंगतिविज्ञतोपनुद्धि-
 विद्वद्वंशकरस्मधृतिरधः ।
 नृपमूलमिषेष गोवितापं
 व्यमुचद् धर्मज्ञंनंगमः प्रवृजम् ॥ ७९ ॥

- विरहज्यरदाहभूमरांगी
 यधिक्रम्यासपरंपरेय हृदया ।
 विविदि दिदयुस्पादि मेगरेगा
 मयमामेदुवि घर्मकालभंगे ॥ ८० ॥
- मरगाकृतयः ककुत्सु मेघा
 यगुरुधुंयतम्य यर्मतापम् ।
 यमगुत्तमनरिपापनेमुं
 गृधुहस्ता इय दिग्गजिरदस्ताः ॥ ८१ ॥
- प्रथमोरितयारिवाहमुका —
 विरममगृदय निरागवृणितम्य ।
 जगत् प्रविशोवनयगृणा
 इय शंभुजर्ज इत्यः प्रोत्तुः ॥ ८२ ॥
- अकृतोस्तदुददुत्तयांशुपाता
 गृधुताय कणसंर्द्धिनः गृविताम् ।
 शिरीषनागगतायनिप्रथमं —
 मृदुदुदुत्तयांशुनिनानि मृदुतानि ॥ ८३ ॥
- ककुत्ता मी त्वावर्ष क्षयाभाः
 कृतताया ककुत्त जदाशये य ।
 न यनर्निर्नि रताया न यम्
 कर्तिमान यनमगृवाया योया ॥ ८४ ॥
- प्रविदि गृधुर्धुत्तयांशुनी ।
 ययना योयययोर्दिशोयनी ।
 मरुदुर्धुर्धुर्दिशोयनी ।
 ययनिमनेर्निर्दिशोयनी ॥ ८५ ॥
- विरहजेय ककुत्त यदुर्धु
 यनमगृत्तुं निर्निर्दिशोयनी ।

पंचमः सर्गः ।

पथिका मरणे मतिं पथंधुः
स्फुरदुद्दामतडिहनेकदंष्ट्रम् ॥ ८६ ॥

परितापहरं पयःप्रफेनं
प्ररुनध्वानमनेकभूतिधात्म् ।

स दुदोह महीविषृद्धये गाः
समयः पानपयोधराद्यतघ्न ॥ ८७ ॥

विरहामहनादियायुषादे
मुद्गरापयंति पर्वतावतीर्णाः ।

पतिभ्ययुरापगाः प्रवेगा-
हृदरीहस्तगृहीतपूगपाशाः ॥ ८८ ॥

स्मरतोमरतीत्रभेदविद-
ध्वनिता चिन्ताशब्दातलोपजाताः ।

स्फुरदतिशिला इयोह्रियंत्यो
घनकूटानि तडिहताः प्रसन्नुः ॥ ८९ ॥

ध्वनिताहृदये तमोमर्षिके
रजनीभस्त्रिकया मनोमयातेः ।

उल्लितस्य घनैरिषानिवांगु-
च्छललीलाकन्यवः समुद्रभूपः ॥ ९० ॥

चिन्मस्युत्पामिनीकध्वन-
क्षयगता घनकालःपातलोश ।

वृहदंडुदमुष्यमानपाभ
पृथुघाताः परिधीलिता इयोर्व्याम् ॥ ९१ ॥

अचिरपुलितनःकर्ममर्द-
रिय कालेन विनिघ्नत्वाद्यमानैः ।

उत्पथे व्यगथा विघ्नमानै-
र्गुणुषे भूतिजले भृशानुत्पथे ॥ ९२ ॥

कमलाकरमूर्तिप्रसाहं
 रसिकं संप्रयिमुज्य मुग्धमत्स्यैः ।
 अन्निगद्भिपानुर्केरुभूये
 सुतमुषैर्विभमं विप्रप्रवाहम् ॥ ९३ ॥
 जलदेरमितः शदानभोगे-
 रतिकर्मण्यगुणैर्निहितगर्भा ।
 अतिहीन्युहीतपुण्यगंधा
 धनं तथापि न केतकी फलानि ॥ ९४ ॥
 विनतेरिव विष्णुद्विगणै
 ररुणाशापवनेरिमदृष्य ।
 एव भृश्यार्षाणशकसापैः
 प्रवितस्तां मयाग्यवह्मनाम् ॥ ९५ ॥
 अन्निगतमदृष्य मालके का—
 मनिरेतां न दूरीं शयन्नुके का ।
 यन्निता मृमुणुनिगम्य के का—
 मणि मयागमतां मयूरेकां ॥ ९६ ॥
 नृत्रगीर्णिता ययोर्द्वेषा
 इव मृगाः प्रमदेन मयाविष्टा ।
 विप्रदेवतयेव मीत्रयागा
 दनुर्षेणव वन्तापिनः प्रतेषु ॥ ९७ ॥
 अन्तर्ज्यैर्नितेन मया
 अन्तर्ज्यैर्नितेन मया ॥
 निमित्ता निवदेन मयाविष्टा
 अन्तर्ज्यैर्नितेन मया ॥ ९८ ॥

जलदागमनोचितस्तु सांख्यै—

सुंवरजं प्रमदासदोनिषण्णम् ।

रचितांजलिरित्युवाच कश्चिद्

वचनं हेतिगृहे कृताधिकारः ॥ १०५ ॥

स्फुरदचिंरुदभ्रदीर्घलेखा—

प्रकराक्रान्तनभस्तयाद्य चक्रम् ।

प्रथिशन्नरदेय ! शस्त्रशाला —

महमद्राक्षमरातिदुर्निरीश्यम् ॥ १०६ ॥

अमरैः परिवीश्यते तदुद्ये—

मणिमालिस्फुरदंनुचित्रलेखैः ।

प्रयद्द्विगिय प्रमोदहेतून्

गुंयापान्यपहस्य पारिदेयः ॥ १०७ ॥

जननाथ ! रथांगतो विभीता

इय शार्प प्रथिमुच्य मुक्तशब्दाः ।

मिलिता धनदमयो धनानि

पथिकप्राणहरान्निरोमयन्ति ॥ १०८ ॥

चकितेष विधेययणंगीघ्न —

स्तय हेतित्यमुपागतो रथांगो

प्रथिमुक्तनिशाविहास्युत्ति—

यंगुथा पंकिलनामपोहतीयम् ॥ १०९ ॥

परिहेतिमयूत्तमीरुष्टं

गगतशस्त्रमिदं प्रगलिनोयम् ।

तत्र देव ! घनाभ्यां प्रवाया—

निव न्त्यत्र विमानं शस्त्रहंमान् ॥ ११० ॥

पंचमः सर्गः ।

देव ! त्रयोदश पदेऽपि परोपताप—
काले प्रभावमहिमोदयहेतवस्ते ।

अन्यागताः सपदि चक्रधरस्य घटं
कुर्वति रत्ननिधयो विविधांगलक्ष्मीम् ॥ १११ ॥

पालं दिग्विजयोद्यमस्य शरदं दिश्यासिलक्ष्माभृतां
चेतोर्जर्जरणप्रभावमहितं चक्रादिरत्नागमम् ।

तस्यैवं सुवतः प्रमोदविक्रमप्रेषोत्पलधीर्नृप—
अत्रैः नैकसहस्रयस्तुनिवहैस्तृष्णाकुटीपूरणम् ॥ ११२ ॥

इति धीवादिपञ्चमूरिविरचिते श्रीपद्मविनेश्वरविरिते
महाकाव्ये घट्टनामचक्रवर्तिचक्रप्रादुर्भायो नाम
पंचमः सर्गः ।

षष्ठः सर्गः ।



विधिप्रमिद्धां प्रविधाय पूजां
चक्रस्य चक्री स यली यलेन ।
क्रमेण दिक्चक्रजयाय जिष्णु—
जंगाम कामार्चिन्तजीयलोकः ॥ १ ॥
अरातिभूपालसमूहभीति—
स्फुटन्मनःशैलस्यस्य शंकाम् ।
व्यधत्त पुंसां नरभ्योकमनुः
प्रस्थानशंभी पटहप्रणादः ॥ २ ॥
जिनेश्वराभ्यर्चनपुण्यनन्दुले-
समं स दिष्टं जिनशामनद्विजैः ।
सहस्रमाशीर्षेचनं समप्रदीन्
भयंति भय्या हितवस्तुषेदिनः ॥ ३ ॥
लायण्यपहयभृतो मुग्गदपंगांका—
ग्मांगल्यपूर्णकलशानिय धारयोषाः ।
आश्वेष्टयंश्च धनुषेशमनाशकीर्तिं
कान्तंस्वच्छयिश्च्यारुचुचान दधाना ॥ ४ ॥
कमन्दोडदि दूरमुञ्जिगामां
स्थमामेदुषि तत्र पार्थिशाकैः ।
असवन् मुग्गहोदयः पुरस्ता—
दनुगगत्यगमुप्रसन्नदिष्टः ॥ ५ ॥
अनेकदिग्भेदविदकंविद्य—
मागोपदेशप्रतिपद्यकृत्यम् ।

दृष्टः स्वर्गः ।

प्रभाविनस्तस्य भयादिवापे
घबं प्रभामानि घञाल भीमम् ॥ ६ ॥

व्यक्तप्रभावेन नृपस्य तेजो
निवेद्यमानं निगिल्लासु दिष्टु ।

उन्काच्छलेनादिनभूपतीना—
मुत्रामषामाम विलोचनानि ॥ ७ ॥

उत्रच्छलेन नुचिताग्दमस्रमुष—
रन्यप्रभामुपरि चक्रपरादस्रोडुम् ।

एकांबरातुगमबंधुतयेव भानुं
छायासुधामधुत्मायृतमभ्यरक्षन् ॥ ८ ॥

ऋतुयवतवा पिदांगहृत्पां
प्रकृतिस्फूर्तहृतां च दंडवती ।

क्षितिपस्य निदेशकाम्ययेवा—
बलतामप्रगदं सिषोऽविक्रदौ ॥ ९ ॥

तस्य पार्थिवपतेरभिपार्थे
घामरं प्रचलिते दिमशुषं ।

कायकांतिविमषामृतमिषो—
वीचिविषमरुचं व्यदधाताम् ॥ १० ॥

निष्टमहाटकरुचिः कटकायभामी
मोच्छ्रायमूर्तिरतिलंघितसर्वनेजाः ।

तेजे स रक्षमुद्गटेन यथा सुमेरु—
स्तारागणेन शिरसि प्रतियुंजितेन ॥ ११ ॥

सकलवमुधानाथे तस्मिन् जयाय दिशां तदा
चलति तदस्मांतावामप्रधानरुतागसः ।

प्रियानवेयस्य पुत्रिभिरा नृणां
 प्रदत्तं पादान् मणिपुत्राण्यनन् ।
 अर्थाभूयुः शुभगाः पुत्रंभ्यः
 गतीन्मृदासकथेयुवादिनाः ॥ २५ ॥

अथैतन्मिदन्तिमात्रशास्त्राद्ये—
 कते नु चार्मनि गतैरपि कृत्स्नैरेवैः ।
 नु जेत तद्वृत्तिने मरभुस्यडा
 वाधाल्यद्वलिकरणीकः ति चपुत्रा ॥ २६ ॥

कृत्स्नपुत्रनिर्गोत्रि तोयमन्त्र
 शक्यभूते सतते चपुत्रिनेभ्यः ।
 अत्रिदन्तिमानुक्रमान्यस्य
 अत्रि यनवर्गेषु सतिना नियुक्ता ॥ २७ ॥

परिपुत्रपुत्रार्था दम्पुत्रिस्तद्वर्गणीकद्वयवि -
 प्रसर्गिमात्राश्च कृत्स्नाणि चयार्थिभ्यः ।
 नर्गादत्र द्वितीयतद्वर्गदन्तिजलभ्यामपि
 द्विपुत्रनिर्गुणैश्च नच स्याद्विनिर्गुणैश्च ॥ २८ ॥

आर्त्तःर्त्तपयदमर्त्तार्त्तपुत्रिभ्याना
 विद्वत्पुत्रवर्गेषु च न स्यात्समा
 नाना नानाश्च सामान्यमन्त्रकथा
 नच न स्यात्पुत्रिभ्यः पतिग मानवैः ॥ २९ ॥

अथगणपतिस्यः—
 द्विपुत्रिभ्यानाश्च न स्यात्पुत्रिभ्याना ।
 कृत्स्नपुत्रिभ्यः अथगणपतिस्यः
 द्विपुत्रिभ्यानाश्च न स्यात्पुत्रिभ्याना ॥ ३० ॥

पष्ठः सर्गः ।

मायूगपिच्छरचितोहमदातपत्र-
 छडायावृत्तनुगमागधदधर्गीतः ।

अंदोलकः गुग्गुभिचंदनदिग्धगात्राः
 केचिन् सुपालसदनाः प्रययुर्महीशाः ॥ ३१ ॥

वस्तुमारनिषहं प्रतिपाद्य
 प्रीणितेन विज्ञपातनयेन ।

नन्प्रयोजनहनम्मह नन-
 न्मंडलाधिपतयः प्रविचेलुः ॥ ३२ ॥

पामरैः स दृष्टो भयादुप
 प्रामयतिभिरुगत्य चक्रभृत् ।

क्षेमदः गुग्गुभिनालितंडुल
 स्तोमहेमनिवहाद्युपायतः ॥ ३३ ॥

केचिद्वयमवदन् वृद्धो वा-
 लानपे मजत घर्म्म दधीय' ।

दीर्घिकानद्रभुज. महकाग
 विधमाय पुस्तोऽपि भयंति ॥ ३४ ॥

र्तरे भूटिडुमवति वधूचंगुभिर्भोजनाने
 विभ्रान्ताना क्षणमनुचरा. पश्चिनीपप्रगूदम् ।

अंभः शुभ्रं सचिमवल्लयं पद्मजालं सनालं
 ताम्यत्यांशी पश्चि धनयतामाहन् दीर्घिकाभ्यः ॥ ३५ ॥

वृद्धदंटागवा. पृथुलधवल्लांगा यल्लयभू-
 द्विपाणा. सिद्धरच्छविग्निरचूडाददयलाः ।

परादालंकारा ययमभगमूदा क्षितिपते
 न रदा हो धत्यापदस्यपि तत्क्षणे सेनार्णवे ॥ ३६ ॥ (१)

(संति चलाति चक्रधरप्रभावः ।)

पुरस्तात् प्रम्यानां पट्टमुभट्टसेनायुधमया—
यारंडप्रारंहां गणशिरसि दंडो विजयिनः ।

भ्युदस्य स्वस्थानादनयनतमूर्द्धसु महतो
द्विभेदान्यश्वेतां स्फुटमयनतेषु श्रितिश्रुतः ॥ ३७ ॥

चक्री स एवं बहुभिः प्रयाणं
रक्तामगादुद्धतभंगकारी ।

हंसावलीनिस्स्यनमुग्धयाचा
तस्म्यै स्या स्यागतमभ्यधत् ॥ ३८ ॥

भंगोच्छलच्छिरशीकरजालमञ्ज—
किजल्कापिंजरितमर्घधियेव विघ्नन् ।

अभ्यागतं श्रितिपमभ्युदयाय वायुः
सिंधोः स्फुटध्वनिमधुव्रतडिंडिमौघैः ॥ ३९ ॥

प्रोहसत्कमलमुन्मदेभमु—

ह्लोलहंसधवलध्वजं जलम् ।

चक्रिणश्च बलमवुट्टद् ययौ
विक्रमादुभयतो नदीतटम् ॥ ४० ॥

स्फुरन्मणिशिलातले सुरभिवह्वरीमंडप—
च्युतप्रसवयासिते मरुति घाति नद्यास्तटे ।

प्रियाधरमधु ध्रमादिव निपीय मार्गांगता
विशधमुरिलेभ्वराः सुखनिर्मालिताक्षाः क्षणम् ॥ ४१ ॥

यावद्विष्टमितरेतरपुष्टि—

स्पर्शयेव मधुरः फलघर्गः ।

चक्रवर्तिकटकाय विभेजे
तद्गदीमणितटद्रुमखंडैः ॥ ४२ ॥

पद्यः सप्तः ।

क्षितिपतिमबलोद्भवैवागतं दिग्जयाय
 स्वयमपिकमपांका घर्मयुक्ता च रक्ता ।
 स्फुटमित इत ष्ठीत्यायदंती शकुंत -
 ध्यनिभिरिव पुरस्तात् गच्छ गच्छेत्यगच्छत् ॥ ४३ ॥
 आमीदत्सकलजनोत्सवेन गच्छन्
 भूनाथैरनुनदि रम्यवर्त्मनैवम् ।
 उपोगस्थगितमनाः स चक्रवर्ती
 शानोदानिकटमगाद्गाधशौर्यः ॥ ४४ ॥
 तस्मिंह्युस्यपतिनिर्मितमूर्मंशुष -
 प्रासादमालि नगरं नरलोकपालः ।
 गच्छद्भिरेव शतविसयमातुलोके
 साहालशालमणिगोपुरमुत्पताकम् ॥ ४५ ॥
 विमज्य सेनापतिपारिपाथिकाः
 परिस्रमंतो भृत्यवंशयष्टयः ।
 परीत्य क्षत्रेभ्वरयाममंदिरं
 निवानयामासुरिजानलेभ्वरान् ॥ ४६ ॥
 अप्रप्रघावितकशाकरमौषिदहं -
 रन्मारितेषु नृपु जित्पिपिशंपभाजः ।
 विप्रुहता इव घनादवतीर्य यानाह
 देव्यो यथास्वमविशमृषमंदिरालि ॥ ४७ ॥
 कश्चिनुरंगमनताः स्वयमप्रभूत्या -
 दभ्यर्धितैस्तु इपितैर्यरोप्यमाणाः ।
 भीत्येव शायकुचपीडितयक्षसस्तत् -
 कंठेषु गाढविषियाहुलता बंधुः ॥ ४८ ॥

आश्लिष्य कंठमयरोपयतुस्तुरंगात्

कांतस्य तच्छयमि कान्चिदयोचदेयम् ।

स्पृष्टा तु मद्यरणयोः कठिना धरित्री

पीडां तनोति नय तन्मयमेव शय्याम् ॥ ४९ ॥

गलद्रात्रस्येदा व्यजनकमण्डसंगमुहिता

दयीयोऽभ्यधांता क्षणमनयरूढा ह्यकुन्दात् ।

विपश्यंतस्त्वभ्युनिंजभयनरम्याजिग्मतां

यथास्थान मेनाप्रभिनियिशमानां क्षितिभूतः ॥ ५० ॥

अभ्यङ्गमागममरम्यविधानवेद्या

यान्ताभ्यतामिव गता तगम्या वेदया ।

भाकस्मिन्कस्मिन्कभानुनयभुंजमान

प्रत्यप्रतीपुष्पिकल्पितमभ्यविज्ञान ॥ ५१ ॥

त्यक्तायोगागदितयद्वलस्यदयिकल्पपृष्ठा

स्पृष्टपृष्ठा क्षितिविन्दुद्वन्द्वानुसर्षद्विभंगाः ।

सर्वकर्मैरभिहिततन यानुमनस्पृष्टानां

जम्बु रत्ना वरगतद्वन्द्वप्रदं कृष्यमाना ॥ ५२ ॥

त्रयैविण्णभाकभूतो भयान् प्रथ

कंरत्नाजस्य दिशस्मिता रथी ।

प्रतापहीनो तनयस्यै मद्यया

दधायदस्त्वानुमनसं रवि ॥ ५३ ॥

इहगयास्य प्रविशति तदा सर्वेति शमापनीनां

वाहीनात् यन्मन्त्रुणयागुद्विध्यात्प्रविध् ।

मेघोन्मय दिवद्वन्द्वी उदुमानागु गच्छं —

स्त्वन्मन्त्रुणयागुद्विध्यात् कर्मैः प्रपु पीडात् ॥ ५४ ॥

यष्टः सर्गः ।

मणिमयतटभिस्तौ सीमवेगाभिघातात्
प्यननि षधिरत्तारं निम्नगायास्तौ ।

विधृतगलवृद्धकं वृद्धितं दयामशैलाः
प्रतिरथमिव चक्रुःशक्तिसेनागजेन्द्राः ॥ ५५ ॥

आसन्नमस्त्रामयमात्मन पय दृष्ट्वा
पक्षस्थलादिव मयस्फुदिताद् गलद्भिः ।

रैर्कैर्विलित इय पाटलिनो यभूय
धूसो रविः करधृतद्रुमदीर्घशाखः ॥ ५६ ॥

जनपतिरयचक्रनेमिषाजि—
मज्जबुध्यातसमुत्थितः प्रलेपम् ।

ध्रुवमयद्दृज्यत प्रतीची
यदधिरत्नैरपराद्रिधानुचूर्णैः ॥ ५७ ॥

गिरिपृथुलकुचोपगूढमास्वद्—
विटयपुद्गलविलामिनीय संध्या ।

कयलिनपृथुषोऽपनीप्रमाया—
दिव परिपाटलदर्शना यभूय ॥ ५८ ॥

रुतसमयमसंगं प्रेयसीखर्यंसोढुं
तदनुगहदयत्वादक्षमाध्यकवाकाः ।
चिचिगुरिव विपादादुज्ज्वलतं रुशातुं
प्रचूनकपिलसंध्यारागसंपर्कपिंगाः ॥ ५९ ॥

आत्स्यहंसमधुरध्वनिजाप्यमंत्र—
स्तकालकुञ्जलितपाटलपद्मपाणिः ।

अंमःशुचिर्विपलनारचिनोपवीतः
संध्यामिव स्वयमबंदत पद्मखंडः ॥ ६० ॥

उपर्युपरि पारिदैरपरपर्यंतं भानुमत्—

सद्येगन्धकेतुपट्टिदृढकोटिदीर्णोदैः ।

विन्दुमज्जलबिन्दुभिः सपदि मुष्यमानैरिष

स्यभाष्यत विषम्समावृतमुदीर्णतारागणैः ॥ ११ ॥

अनुतदमरणप्रभामणीनां

वरगमितस्तु यमां तदैव खेदात् ।

सपितरि परगोकृिनि स्यकाले

जलमयगाहितुमागणैव संख्या ॥ १२ ॥

भाषामायहततपनयः प्रयातो

नीहाय स्फुटनिनदा गुफा विषधुः ।

कार्ददीमय गगनाडना ध्वनंती—

मुग्मुग्गणकमला प्रशाणकंदाः ॥ १३ ॥

कलमकलिताना नृद्वेदादाय सायमुपस्थिता

स्वागतिजननीदंष्ट्रा हृष्टा वृद्धाय निपाशिताः ।

इरविपनिवम्भुनाग्मुग्गवस्वनाडगुफाशयकाः

वृत्तिवयवददृदीदृश्रिय कोमलागणनी ॥ १४ ॥

अनकमुगप्रभ व दिनागाय

विनेटगदृष्टु निगाथ्य निष्यनसः ।

नवान माधुद वदसा हृषार्त्तं द

स्य सुभवाडटागिगुन वरभरि ॥ १५ ॥

कदंभल सासत्र समाधि दिनागिनी

विनिगणकदृश्रिनि इनुमार्त्तं ननुभूयसः ।

प्रदृश्रियदनुदुग्मदेवमधुगोदृष्ट

कनुमनदवददृश्रियस्य दृष्टम ॥ १६ ॥

॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

बहुः सर्वः ।

अभिमतहृत्तमंदिदं प्रदेसं
बदलनमोपिदिनेऽपि राजमार्गे ।
मनगिंजमनिषोपदेनादृष्ट्या
स्वयमायनैरभिगारिका प्रजग्मुः ॥ ६७ ॥

एतदचिबुलटालीज्याया मीलयासा
निभृतपदमदप्रंधकारेऽपि जग्ने ।
निशि विटनिषहो मद्रिकामालभारी
भ्रमरपटलनिष्याककोलादलेन ॥ ६८ ॥

पिकचकुमुमदामोदामगंधानुबंधि—
भ्रमरपटलमालाकेलियाऽशंभराजाम् ।
त्यन्तमपगतम्य स्फारदीपांकुटेभ्य—
नमस इय विर्मात्या कर्मरेखा विरेजे ॥ ६९ ॥

शिलीमुखानां चलनामितस्तनः
मुणेषिमास्यप्रथितासु पीथियु ।
निशि स्मरस्येध निशम्य हुंहरति
मुदुंमुदुंमुदुंदिर्विताथियोगिनः ॥ ७० ॥

आक्रान्ते सति तमसा नभस्यपारे
षभ्राजे मणिरचिमेंडलेन राश्री ।
आलीदोर्दमथ चक्रिवेदम यद्वत्
बालोदस्तुरगवधुमुखानलादिषु ॥ ७१ ॥

१ बदलनमोपिहिते अन्वंधकारेणाच्छादिते । २ मनगिंज कामरेव ।
अमगणा द्विरैफानां पटलं समुदाय तस्य निष्यान निखनं तदेव कोलाइस
लखललेन । ४ दामा यव । ५ शिलीमुखानां भ्रमराणाम् । ६ इयिता
इथोगिन विरहिते । ७ आक्रान्ते भ्यामे । ८ आलीदं भ्यामे उदरे
णस्य तत् । ९ बहवानस प्रवृद्ध इत्यर्थः ।

विमुख इति विवेकी नेति दुर्वारदपां—
 घह इति घरहारीत्युद्धतश्चेति नित्यम् ।

कमलमुखितचाराद्रक्षसश्चेद्राकः
 स कथय कुचयोस्ते किं न ते संति धर्माः ॥ ७२ ॥

पीडासहं मधुरमव्यतिरिक्तं राग—
 मावद्धुंवनरुचिं रतिनाट्यरंगम् ।
 तं चेन्न वाञ्छसि मुखान्वितवस्तु नाम
 विस्तारमृच्छति गुणस्स तथाधरेऽपि ॥ ७३ ॥

निर्मलधवणसंगमनंगो
 भृंहणच्छविमनुच्छविलासम् ।
 कांतमाक्षिपसि यद्युत्पन्नं
 किं न ते तरुणि तादृगपांग ॥ ७४ ॥

स्वभाषमलिनस्थितौ शुचिरहेतुयमाकृतौ
 मज्ज स्वरसगंधतृप्तमधुपे सतामाधयः ।
 निखृष्टरतिनिप्रहे सरति नायकः क्षिग्धया
 घटेत यदुपेक्षते मुदति केशवेपे त्वया ॥ ७५ ॥

किमिति तरुणि तस्मिंश्च जनन्यासमन्यं
 रचयसि तय सिद्धयेदन्यथा कामसिद्धिः ।
 स हि तव मृगनेत्रे नेत्रगर्भस्थितः स—
 क्षपि भयति निमित्तं त्वन्मुखदयामत्तायाम् ॥ ७६ ॥

शुचित्यमपि तस्य विद्धि यचनान्मम प्रत्युत
 स्वमेव सुभगे शुचिः कुचमरायमशोचितम् ।

१ दुर्वारदपां घह दुर्वारे निवारयितुमशक्यं वरुं गर्वितं बहतीति ।

२ अव्यतिरिक्तं अपृषग् रागोऽनुरागो यस्य तम् ।

पद्यः नवः ।

यदुदरानि परात्मा तन्निर्दात्मच्छोक्तान्—
मयूग्ममुखसुविताधर्मसौ कांतनंबंविनी ॥ ७७ ॥

इति नगि कपयेव तमोमुंचा
युपनिगन्मपती दयितागमे ।
अहल बुद्धिमधिज्येनारामने
निशि नर्मापगने कुमुमायुधे ॥ ७८ ॥

दयिता नर्मापि विगृह्य यधू—
रतिकानुंबंन नयनेऽधिनिसम् ।
दयितस्य च द्रुतमनागमना—
दमिर्मालदंगुपिनेव दशा ॥ ७९ ॥

तीव्राभिरंगमतिपाल्य रतस्य काले
शात्ता श्रियस्य निशि कान्दिपुपस्थितस्य ।
क्रोधोदयादनुनयादयधीत्यंती
पादप्रदागमरुनोति यायकांतम् ॥ ८० ॥

आगता प्रतिनिवृत्त्य घेदमतो
यहाभस्य निशि साम्यमूयया ।
कांतयेति नवमोमोलाछना
नंफालीवचनमभ्यद्रीयत ॥ ८१ ॥

संख्यं दूति यदाययोगधियिधत्तत्रापि मत्प्रयमी
तन्मध्यं प्रतिपन्नमत्त यदयं मदेहदेदयं व्यधात् ।
प्रस्येदात्रंमुखं नखरानपुचं निर्दिष्टदंतच्छदं
तांशुर्दाकविलोचनं नय गतिज्वात्यमनयत्तं यधुः ॥ ८२ ॥

१ अच्छ निर्मलमत एव शुरुन दीक्ष्यमाना ये मयूगा किण्वानि तान्
मुक्तानि तैशुभिलमपर इतरच्छदं येन तम् । २ तमोमुचा चंद्रम । ३ अयि
मारोपितं धरासन धनुर्वस्य तस्मिन् । ४ अत्रिचापत्येन । ५ नव च तत्
तस्य लोच्छनं किन्द् यस्या सा ।

घनतमसि निघासे सन्निधाने सखी मां
 युवतिरघरविन्धे चुञ्च्यमाना प्रियेण ।
 उपनतरतिलोपं दीपमुद्दीपयंतं
 परिजनमुदितेर्ष्यारूक्षमीक्षां वभूव ॥ ८३ ॥
 वनिताश्रुयनीविखंडयासा
 शिशिरंमःक्षपिता भियेव शीताद् ।
 वृणु मां वृणु मामिति प्रयंती
 शयनस्थं परिपस्वजे स्वमीशम् ॥ ८४ ॥
 योजयन् जघनमंडले दर्शा
 बल्लभः प्रमदया त्रिवस्त्रया ।
 मंगलमकुचभरावनुद्भव--
 क्ष स्थला युवतिरपीत्यताघरे ॥ ८५ ॥
 अनुनयकृतिवल्लभे कृताग--
 स्युचितमिधावयती जगाम लज्जाम् ।
 अनुनिदाममिमानबंधमंगा-
 दिप युवतेदिशधिलीवभूव नीर्षी ॥ ८६ ॥
 रागी विथोगममहद्विष रात्रिमिदु-
 मुक्तां मुहृतंमधनीप्रथितप्रदोषम् ।
 तस्याः प्रसादनमिष्यणं कमुद्रहृत्ता--
 मन्वेष्ट काम इव गोधरमप्यतोद्दह् ॥ ८७ ॥
 हिमांशुरघत्फगचक्रयालं
 शेषोत्ताम्यारुजरन्नदीप्तिः ।
 भुधो भृता यं स्वयमन्विषाय
 प्रमामियोर्दीप्तिमुग्धितम्य ॥ ८८ ॥

१ टण्डलमूदका । २ मृगशर्पिणः । ३ शेषनागादिर विषतत्त्वस्य ऐतिरिष
 कादिरिषेति उक्तमित्यादि ।

यष्टः शयः ।

पिनांगमंगः शुभुमे दिमांगो—
 विषं गिरेः शृंगपिनांगि राशौ ।
 तत्रालागाप्राज्यहृत्नं स्वस्म
 प्रापोदयभ्येष सुषर्कवीडम् ॥ ८९ ॥

मदापदाभ्यकोरनेत्रा-
 मुद्रागयन् श्यांतपिनांगियामः ।
 निनामिपालिगितुमंगरागी
 प्रमाख्यामाम करान्मृगांकः ॥ ९० ॥

मुदं मुदिप्रा जनयन्जनानां
 बरुधिं मंडलरागरुदः ।
 राजा मपोनोऽपि विलिप्य काष्ठा-
 मध्याम म्नापोदयमद्वितीयम् ॥ ९१ ॥

एदतिमिरभमप्रथोमगमौयकीर्णा
 विरुदयिषिकमिदोऽदमयः शुंदशुभ्राः ।
 सरामि रमेविद्योगान्पंकमात्रायशोप
 चितनमृदुगृणालीविद्यमं विस्रमे स्म ॥ ९२ ॥

आपीप्यदमृतगुनिविदलिताननामुच्छम—
 सरगशयनां शनैः शुमुदिनी विमलांयतः ।
 कप्रहसमपित नयसुधारसं सुंदरी—
 युषापि मधु मानयो रचिरहंसनूलाधयः ॥ ९३ ॥

अभिनयराचिमान्मनि प्रमत्तां
 स्मरुत्तामिन्द्रिशाः स्वयं धवत्या ।
 परचंपक इचोत्पलीविशुद्धे—
 हिमराचिंकभृदायभाषदस्रः ॥ ९४ ॥

१ मृग अंके शोभे यस्यांगो इदुरित्यर्थ । २ रमविद्योगान् उदरादित्यात्
 ३ धेष्टमयमित्यर्थ ।

शुभान्तराशुभितरागंधी—

उर्वोत्तिष्ठिमानेन जगद्भिजेन ।

अनेकथा लक्ष्मिणादभूमि—

तेषाम् विमुक्त इवेदुक्त्येवम् ॥ १० ॥

कांक्ष्य ज्ञानवसतो विलीकित्वा—

पलायते सर्वे मूढे वृमुहनीनाम् ।

हास्यधरेण वनिगच्छवितोऽसंभवा

सादृशम् नमसि सादृश्या पणक्ये ॥ ११ ॥

विमलवशात्तया मयूषा

कालात् न ह्यस्यैव तया

मर्षादनायास मम ज्ञान

कालात् न मयस्यैव तया ॥ १२ ॥

नवादि यत्र तत्रशास्त्रम् नवीन्यामा

नयमा कृतं कृत्वा म नि ज्ञानमयं सर्वे ।

इत्यापनात् त्रिंशतीं यथाशास्त्रात्

कालात् न मयस्यैव तया ॥ १३ ॥

मया ज्ञानमयं तया

न नि ज्ञानमयं तया

मया ज्ञानमयं तया

न नि ज्ञानमयं तया ॥ १४ ॥

मया ज्ञानमयं तया

न नि ज्ञानमयं तया ॥ १५ ॥

मया ज्ञानमयं तया

न नि ज्ञानमयं तया ॥ १६ ॥

वष्टः ममोः ।

सौधोपलौ दृश्यप्रयाणा—
द्विध धमार्शो निदि चंद्रपादाः ।
संभूय मंदागतमात्मनायां
विनाधमुः स्पृष्टपभूतितंवाः ॥ १०१ ॥

साम्नांगामलन्यकटा—
संश्रानपे बुंथति पंकजिन्याः ।
आनंदयोगादिय मानुगमा—
स्यमीलयन्नेपुञ्जलोचनानि ॥ १०२ ॥

दुचिम्मिनंषामयिलोचनानां
प्रदामनोष्टयामभिनंदमानः ।
संभूय रागादिय पीरगात्मा
सृगं करदिसप्रमगे निवेदो ॥ १०३ ॥

लीलायिलोलनयनोत्पलभृति संघ
दृगे शशांककचिमंति मदीपकंति ।
कामानुरा युगतय. व्यधंयन्मभूनि
तागां मुग्धानि समखानि पुनसुंयानः ॥ १०४ ॥

अवेश्य मूर्ति मधुनि स्वकामिति
स्यतकंयत्वाचन ककं.शस्वती ।
अहं निर्पातास्मि किमंग हांलया
मयंय रागात्प्रतिपासितव्यया ॥ १०५ ॥

अतिपानविधेस्पृष्टनुमेका—
प्रियमुहामसुगंधिकापि जेये ।
अधरप्रनिषिधदर्शनेन
स्पृष्टपालुं विदधे पुनविदग्धा ॥ १०६ ॥

१ प्रामादपंतवाम् । २ अपिबन् । ३ मुरया ।

हरिणदशां मुखैः सह निशोदितशीतरुचिर—
फलदंफलुयांधवममीभिरमा ।

यदयं मणिमयभाजनस्वमदिराभृतधारि
मिलधनुडुदनल्परामसुहृदिप्रतिविद्यगतः ॥ १०७

ध्रुवं यधूवल्लभकंठगह्वरा—
दृहीतहालामदशक्तिरुद्रता ।

विमोहनं देहभृतां व्यधत्त —
न्सरस्वती गीतमयीधुनि गता ॥ १०८ ॥

दृढतरपरिगभणच्छलेन यूनां
कुन्वभग्मुद्रहतामिय प्रसन्नाः ।

अधरमधु नतमुषो विनेनु—
स्नानुतनवल्ननुमभ्यत्येदहेनुम् ॥ १०९ ॥

यधूयगन्मधुमदनि लप्रियः
स्मारां मुदा भरतरम्क्रियागुरुः ।

अयोत्थयतिधुयतनृत्यकर्मणा
समुद्रमद्ररत्नतालयोत्तनः ॥ ११० ॥

अचिह्निदन्यामदृश प्रयन्ताः
प्रचन्दतोयैः पुरपायितेषु ।

यक्षांसि यदगन्धुवकुंभमुक्तं
मूर्तेरिय प्रमर्गः प्रियाणाम् ॥ १११ ॥

रातिक्रियागामगिकप्रवृत्त—
म्यापुंसदीलालयकंठशब्दाः ।

अन्यत्रिगंनेय रामं शयद्रं—
रत्नास्रिद्धारिणि शक्यार्कैः ॥ ११२ ॥

जलमय गिरगि स्थितो मृगांक्षो
मदनदृगो हनकथ्यकुंभतुल्यः ।

वृष्टा मार्गः ।

रातिरगममभिद्यमानयाना—

गुपरि शुभामिष चंद्रिकां मुमुषे ॥ ११३ ॥

दीपिप्रगारितकरोण गुदाशृष्टेषु

संबीहनायेमिष चंद्रमया विष्टया ।

जातेष रात्रिपटाद्रिमिषाय गुने

गुने जने शुभटे पश्चिमदेनाभस्या ॥ ११४ ॥

उम्मुष्य सन्मार्गमुदममुषे—

रांज्ञानमाराधितयांगीकम् ।

अयेतयामां धपणानुवर्ती

नक्षत्रलोकास्तमनु प्रतरये ॥ ११५ ॥

गदसं द्वि भूरोहमन्मनोभू—

रभिगच्छप्रपरां शुवात्थामा

पदने स्व शुभाशृदाप्रगुम्—

प्रमदानां जघनानि वाक्त्रोपिः ॥ ११६ ॥

गादरतिवंचतया गुरतिक्रमेण हृतिभिर्यनिता ।

परित्यज्य दष्टमशुतोष्टमणीनिभूतं निरा पत्तितां सुशुषे ॥ ११७ ॥

शृष्टेषु राज्ञामयस्सनाये

निद्रानुगेधेऽपि निराभियोगान् ।

समुदभुषुयुंगपप्रघोषाः ॥ ११८ ॥

अंधांतघांतमदसांरमलोमसंगि—

भृंगस्वनेरिव सुखप्रतिबोधभाजः ।

१ बह, वृष च । २ बारुनी मुग, उत्तरदिक् च । ३ न स्वको मार्गो य
नदमार्गानुयायीत्यर्थ । पक्षे न स्वको मार्गो येन स्वमार्गानुयायीत्यर्थ । ४ प
क्षत्रियतामूदेनेति श्लेष । ५ निरंतरप्रवाहितस्येत्यर्थ ।

आलानधामदृष्टंखलदन्धशब्दाः
शय्यां विमुच्य शनकैरगमन्गर्जेन्द्राः ॥ ११९ ॥

शिथिलय कलकंठि कंडदेशात्
भुजवल्लयं ललिते ! मम क्व वस्त्रं ।
परिणतिमगमन्निशा यदेताः
शकटरथैः श्रवसी तुदंति रथ्याः ॥ १२० ॥

संभूय संभृतलयाः प्रयदंति तांश्च--
चूडाः सनीडरतपस्तदहं प्रजामि ।
तन्वंगि यन्मयि समाश्रितभृत्येभूये
भूयः प्रसादयिषिरेष विधायिषीष्ट ॥ १२१ ॥

विधंभात् प्रियतथसंगमेऽपि चेतः
स्वस्यं त्यदि रगतो प्रयान्यघायि ।

आनेयं मम पुनरप्यदो निशीथे
तत्स्येच्छागृहमिदमभ्युपेहि मा वा ॥ १२२ ॥

चेतोऽसिर्द्विपुलविलम्बद्रागरत्नायतंसा
साऽतो योगानियतजडिम । न प्रपीडां तनोति ।
भोगिन् क्रीडाकुशलभयता यद्युपेक्ष्यंत काले
व्यालच्छाया विरचयति मे नु. स्वदोषं प्रदोषम् ॥ १२३ ॥

इति विटकुलटाजनस्य जैत्र--
मन्शास्त्रीतिकरे त्रियोगभारे ।

उपनतयति रात्रिपथिमांते
प्रणयगुरुयंचनक्रमो वभूय ॥ १२४ ॥

आलिगनोऽहत्तमंइलितेषु कांतैः
कांतावृषेभ्यनयकाज्ञानयेव रात्रौ ।

पद्यः सप्तः ।

सौम्यं प्रपद्य कमलेषु निजापनाये
तत्रोन्मुषी पुनरमुषय इहमार्थीः ॥ १२५ ॥

विचिन्तिमालदामनोगलनेत्रकोटि—
निषेणुयारकजिवागु वृमुदनीपु ।
बाने पिपी विविषद्भनममीपयाने
लोकप्रताप इव भृंगस्यो यमुष ॥ १२६ ॥

दिमरुचिन्मये प्रसंगदर्श्या—
दुपरि विहागिल दूरत प्रयाने ।
मधुलिङ्गकुमुदेशणा वृमुद -
स्यविद्यमति स्म सरस्वतीगताप्याम् ॥ १२७ ॥

प्रियविग्रहमहेन्द्रादोक्तनिश्चामदाय
प्रसरभस्तिमुन्मन्ज्योम चन्द्रमपस्वी ।
तरुणहरिणपाटी दाहभीनेरधाप
स्यरितमिय मर्मापं पश्चिममार्गयम् ॥ १२८ ॥

आलिंग्य परममनू रविचक्रसंधि -
निद्रायिता विकचयोरिजगंधयंधी ।
घर्येषु बुद्धिमदधुर्जघनच्युतेषु
प्रामातिके मरुति घाति विदामघत्यः ॥ १२९ ॥

समयमत परम्परेण दूर-
प्रगूततया निदि लक्ष्यभोगपीडाः ।
परयुधनिषुचा विभातकाले
समदमुद्योप्रतयश्च चक्रयाकाः ॥ १३० ॥

रात्री दीप्तमयूखनेपभुजगादाद्येर्विनोदरिणो
भीनेवाकंधियोगिनी कमलिनी निद्राछलान्मूर्छिता ।

१ राभ्यवसाने । २ प्रस्तुतिवकमलसुनिवाहिते ।

तस्मिन् कंधरकाललहमणि गते शोणाग्जनुंभन्मुले-
 रज्जतभ्यामनयप्रभातमरुता लघ्वेय संघेतनम् ॥ १३१ ॥
 धीर्घकी निशि मरोरुहगेहगर्मा-
 होपाकरेण कुमुदाकरधेदम नीता ।
 भास्याग्निपम्य पुनरागमनाद्भियेष
 प्रत्यायिवेश पुनरंयुरुहं प्रभाते ॥ १३२ ॥
 अनुविधिमधिकप्रभायितस्ने
 यकित इयैव करादेहो विधानम् ।
 अन्तरमयनीभ्यः प्रतीकतुन
 गिरिशिखरातरिता मरागुगम्ने ॥ १३३ ॥
 मृगमृगुलामितितोहृदावर्षापु
 निर्मज्जनविमलनिकामिय प्रसन्धाम् ।
 यामोरुचनकृयमारुणकयाकां
 क्युष्टांयां निशि नृपचंद्र मा विगीडा ॥ १३४ ॥
 निनुचननिद्रिमुक्तं मीणमधं मन्वीना
 भ्यगक्यद्विशाभं शंहराप्ता प्रतुंहे ।
 प्रचनतयदनाप्रा म्छया देय ' देयी
 इरहगितमनोत्रा पदय पयैतदृया ॥ १३५ ॥
 अन्वेष्टु विज्ञानियमं समोऽवहार
 ये शंवेरुनिन्दक्या मुद्रागिताः ।
 प्रत्ययोच्चिनिविदशा ल्याया न वने
 दृश्यता नृप कृत्स्नगीयाः ॥ १३६ ॥
 अन्वेष्टुनिन्दक्यानिमि प्रतिपदिता
 मयक्यद्विद्वानिर्गं मय ।

अभिनिवेशुमियांगणनोरण—

स्मिन्तयनी वामला प्रतिधीक्षने ॥ १३७ ॥

नेजस्मिनः स्वप्नदशाभृतम्ने

ये प्रत्यया दृष्टिद्यप्रयाताः ।

भयादिव छातिमयो यथोक्तां

कुर्वन्तु ते सर्पजनीनसिद्धिम् ॥ १३८ ॥

प्रस्येदांशुलघान् मुखादपनुदधार्मालयन् लोचने

सोहासामलकायलीं विलुडयन् मंजन् नितंपस्थलम् ।

नारीणांमुरतायमानममये कार्माय कुर्वन्प्रियं

श्रीन्व्यं देव ! तयांतिके प्रसरति प्रोभानिको माकनः ॥ १३९ ॥

तनुजिनपतिपादहंडता शारधिदं

धिकमदनयमाने मानसे तत्र भूयः ।

मरुलसरमचेताः भ्येतलहर्मापिन्दासे

त्वमयनिपतिहंसो हंसलीलां मजेयाः ॥ १४० ॥

इत्याविष्टृतपंचमप्यनिचच. धोशामृतं धीपतिः

पीन्वेय प्रतिपत्रबोधयिमयो मंदागतं घंदिनाम् ।

उत्तस्यां दापनाडिधीर्णकुमुमम्रानादिकांतारथैः

चम्री विक्रममोदरः स्वरविहा द्वीन्विय कृत्कारिणः ॥ १४१ ॥

इति धीयादिमाजमृरिनिर्विने धीपाभेत्त्रिनेभग्चतिने

महाकाव्ये यज्ञनामचक्रयतिप्रबोधो नाम

षष्ठः सर्गः ।

सप्तमः सर्गः ।



•तमोमलिनमाहृत्य बन्धितानं दिशाभिष्य ।
तस्मान्मृगभिष्यत्ताराकैः प्रमत्स्रोहितच्छयिः ॥ ८ ॥
मानुमत्करांयाहादुष्टियतायास्तदा धियः ।
समी कभलागामे मंत्रीरिष्य मित्रितम् ॥ ९ ॥
अशोकपादुयेष्टयस्यालंविता इय कानने ।
वतीपप्रसूतेषु कैमुपयमिय मंभिताः ॥ १० ॥
इत्याययत सासत्या स्ताःस्ये नवीजने ।
नयसाधनकपरीपातामामुत्पुवमक्रियामिय ॥ ११ ॥
तिरिर्गिर्गदाओपु कपाणाः पदपतो नूनाम् ।
भूमीर्जाभनामदृष्टयतागप्रसस्रमम ॥ १२ ॥
प्रयादपादुदाकःडोपणवरोष्ठेषु योषिनाम् ।
मृववप्रणनिमुकःकवारोपमापदाः ॥ १३ ॥
गादादिमननप्रमत्त जतीरुष्य मत्तुवाम् ।
स्वनेषु राम नारीयवोदुर्वणा क्तविशियम् ॥ १४ ॥
अपित्ताशास्त्रा यानुकीमयवेव्यपकरणाः ।
शापःपूर्वियतांयेव्याहन प्रमत्त न पश्यमयः ॥ १५ ॥ कृत्तवम् ॥
भाण्यमंडकनीदकनी पृथगी तपयोपदी ।
पादभ्यास्वद ॥ योतःसृष्येनु मुन्नाम् ॥ १६ ॥
मेवभ्यान्कमोत्येन शपकनी र्शियसिददी ।
अपयसा दिर्गित्यपयो साद्रीदीदीवापुदी ॥ १७ ॥

सप्तमः सर्गः ।

च्याल चक्रिणधम्या चक्रिताम्य चमूर्द्धियाम् ।
 शिषिपान्निर्गमे तम्याः कायेभ्यो निर्व्येयाविय ॥ १८ ॥
 तेजोभिर्यवृधे तम्य सर्वदिधु प्रतिक्षणम् ।
 आलिगनादियारिस्त्रीनिभ्यानप्रसरोप्पणाम् ॥ १९ ॥
 अटदयो षलसंपाताञ्जयमाज्ञंसतो मिया ।
 गृष्करेभ्येयामयत्तम्य नूनं सेनापरिच्छदः ॥ २० ॥
 सेनयाऽनूनया तम्य निगृष्टोद्धतभंगया ।
 मीतोदयेष मीतोदा प्रख्यान्नायनुरनया ॥ २१ ॥
 तीरद्रुमापटीलभाम् श्यामवारिस्त्रागिणी ।
 उत्पन्नेष तमायातमद्राक्षीन्प्रमवेदाणा ॥ २२ ॥
 तस्मैम्यनूर्यंसंघातघातोऽधनुमुलभ्यनिम् ।
 नादेयप्रादिनिर्घोषः स्वघोषमपुष्यपुनः ॥ २३ ॥
 जलेमपुष्करोद्गीर्णैः प्लानुच्छच्छटाजलेः ।
 नघोषोत्तमितालम्य ध्वजास्त्रसंनिधिदृष्टया ॥ २४ ॥
 फलवृक्षे नियन्त्र्यं तत्र तत्र मनोदहे ।
 तस्येत्वागूचयन् निभुर्भगसुक्षेपणाङ्गुयम् ॥ २५ ॥
 तीरपर्यतसंर्वाणेष्वरागामरीचिभिः ।
 पुत्सृक्तानुसारेण निघ्नता तम्य निभंभा ॥ २६ ॥
 केनल्लवानसंघोषि भंगल्लग्न्य पातिभिः ।
 गुणैरन्वयगतम्य हयसेना महाजदी ॥ २७ ॥
 नाटदयगाधता तम्या महत्सेष घटीच्छया ।
 द्विगताया यदि निभंभा घञ्जनाभदयोप्यसौ ॥ २८ ॥
 तस्यघनीपलाशाशाम-
 तदघटे यत्र यतिर्त्वा

१ उपधीना ।

तद्दृष्टसमयोद्रीर्णकोधघूर्णद्विलोचनः ।

प्रोद्यत्कहकहाभ्यानं प्रहस्येदमचीकथत् ॥ ५४ ॥

ईदृशी तादस्यैव युज्यते साहसक्रिया ।

यशसैवार्थिनो नित्यं न प्राणैः प्राणमृत्प्रियैः ॥ ५५ ॥

विगाहमाना व्योमाग्रमद्य मत्कीर्तिवह्वरी ।

अनेनाख्यप्रकांडेन किं न चंडेन खल्वपतेमम् ॥ ५६ ॥

तोमरप्रणिघेस्तस्य जलानिक्रमकारिणः ।

अमी रत्नविशयाः किं नोपस्थानं प्रकुर्वते ॥ ५७ ॥

इति श्लोघोपहान्नाभ्यां यथार्थमेव भारतीम् ।

अमिजल्पंतमाचव्युस्तमन्ये ख्यातपौरुषाः ॥ ५८ ॥

इयमत्युज्वला लक्ष्मीर्यद्यतः प्रथिताभ्रतेः ।

सौदामनीव जीमूतात् कस्य शक्या पृथपिक्रया ॥ ५९ ॥

व्योमेवाक्रांतविश्वान्ते यलाद् दुर्लभ्यपौष्याम् ।

हठादाकण्टुर्माष्टे कः धिर्यं चंद्रकलामिध ॥ ६० ॥

तस्य का वा भवेन्न श्रीर्यस्तु ते संगरोत्सवे ।

चंडदोर्दंडकंडूतिकंडूयनमरक्षमः ॥ ६१ ॥

अमत्यनिघहाचार्यधीर्यल्यतेस्तवेदृशी ।

मानवानुत्तमे तस्मिन्नाश्लेषोक्तिरगुक्तिका ॥ ६२ ॥

अतस्सुभट्टसंमर्दलब्धविक्रमसिद्धयः ।

ईप्सितार्थक्रियासिद्धौ देव ! प्रेष्यामहे धयम् ॥ ६३ ॥

यहलप्रस्टतोहामभूमप्रत्यूहलोचनः ।

दूरादभ्येत्य दायांशं कातिकामितुमीश्वरः ॥ ६४ ॥

शुष्कांबुतलमात्रस्थम्राम्यत्तिमितिमिगिलम् ।

करयाम यदीच्छा मे शीतोदाकुहरोदरंम् ॥ ६५ ॥

सप्तमः सर्गः ।

निरव्य नीरसं घृतिभारमजंयगदहम् ।
 संपादयेम संपूर्णं तत्र देयं यज्ञोऽमृतैः ॥ ६६ ॥
 मेघमुन्माल्य भूगमांस् प्रमायं तत्र नाभ्यतम ।
 कीर्तिकल्पलतालंब्यस्तयमुन्नभयेम ते ॥ ६७ ॥
 अघात्मान्नतः शुभ्राः यलादाहल भायली ।
 दारीकतामिलामिन्ते भूपयेम भुजातगम् ॥ ६८ ॥
 धीगमित्यभिधायोद्योगकागविष्टनोऽगमा ।
 अभूवन्मुह्यन्तस्तु मामधानीकनोपका ॥ ६९ ॥
 प्रकोपताम्रया दृष्टया स्वद्वकाभ्यामिपश्यत ।
 प्रागेवाजनि संप्रामान् म ध्रुवं निगलोहित ॥ ७० ॥
 कैधिद्वज्जमया दंडा ददमुष्टिनिर्वाडिता ।
 श्रीचक्रुर्धियमोर्दान्तर्यथयैव परिधमम् ॥ ७१ ॥
 ददन्त्याकृष्टिकर्मण्या वीरुडं मडलीकृतम् ।
 जयधीर्गप्रयेनाय दधुर्दुर्गमियापरे ॥ ७२ ॥
 वन्नसंयाहितध्यान्ये मत्प्रसामधवयर्जित ।
 वकाक्षिते भूजे ददयतेजः पहयिता इय ॥ ७३ ॥
 केनिम्निगर्गनिर्गन्ना निम्बिनात् दधत र्हर ।
 प्रत्यागप्रत्णप्रीत्या दधुर्दुर्गिगुणा इय ॥ ७४ ॥
 माम्भ्यतः स्वप्रतापस्य परिवेषमिषोन्नित ।
 गदापर्वतवददध्याहोः केनिद्वितलम् ॥ ७५ ॥
 कोषदागोदगदंतदीविमिलरक्षणागुणसम् ।
 अभिषिन्नमियोदक्यैपियमुधिबसे भटा ॥ ७६ ॥
 आपतगमधुपालापंगान्निहृत्विदता ।
 केनिद्विषाणालयागुणिव इवे प्रथमोऽयम् ॥ ७७ ॥

तं म्लेच्छाः सयैभायेन समरेऽसमरे चित्ते ।
भग्नाः शरण्यमाजग्मु पीडने पीडनेरिताः ॥ १२५ ॥

समदर्शीप्रदानेन समदर्शी स संयुगे ।
मनुज स्वामिन स्वैरमनुजप्राह तातय ॥ १२६ ॥

सेभ्यो द्रुषिणमादाय मनोमदनयाहित ।
आययौ स नृपोपात्मनामदनयाहितम् ॥ १२७ ॥

ज्ञानोष्मणि गुहागर्भे स सघ्राष्ट तत्र सेनया ।
अगादशक्यसम्पत्ता गृध्रिया व्यसंनया ॥ १२८ ॥

भिसिलेभ्या विर तात काकलीमणिनिर्मिता ।
तत्र हृदयसरे तात पुण्ड्रिका तमायता ॥ १२९ ॥

सा सेना समयामास गुहागर्भे तात ॥ १३० ॥
सा सेना समयामास सघ्राष्ट तत्र तात ॥ १३१ ॥

विहितारिषिदानेन विदा नन तना समत
यदासा वीरिनी मानवपिना मा नवराया ॥ १३२ ॥

तस्याप्रनत पयोषा हेमकाश्या मानवः

विमलकल्याणन सघ्राष्टाय समुपगता ॥ १३३ ॥ मा नवरायनवम् ॥

पुन विरनयाम् ॥ १३४ ॥ नवरायन
यत सेनायति ॥ १३५ ॥ नवरायन

॥ १३६ ॥ नवरायन

॥ १३७ ॥ नवरायन

॥ १३८ ॥ नवरायन

सप्तम सर्ग ।

हृतदूर्ध्वव्याकोरा वृतनाक्षोदपीडिता ।

पांडुच्छन्नोत्पपातेष स्वस्थानाद्वियदुर्वच ॥ १३७ ॥

सद्यो पाचरथो त्योसि जजुमे घोरमुषत् ।

सद्योयाद् एपास्यास्तु संगरोद्रेगकारणम् ॥ १३८ ॥ अक्षरव्युत्कम् ।

अरीणामुत्तमांगानि निशिताननतोमरैः ।

चिच्छेद् निक्षयान्कश्चित् ध्योमस्थैर्विनतोमरैः ॥ १३९ ॥

तरवारिभृतः सद्यो घोरैः कातरवारिणः ।

का निःकंपेति रे घाचो मटेस्संपेतिरे पंतः ॥ १४० ॥

अंतःशून्या घटप्रागपाशसंनहनादृषा ।

अनपद्मा घनघ्नैर्बाणै कंचित् प्रजडिरे ॥ १४१ ॥

अंतःशून्या घटप्रागपाशसंनहनादृषाः ।

अनपद्मा घनघ्नैः कोणैः केचित्प्रजडिरे ॥ १४२ ॥ अक्षरव्यत्ययः ।

अस्त्रैरिषुधियो गाढाः कृष्टैरप्यन्यकैर्हता ।

स घैरिषु वियोगादकृष्टो इत्वाऽभ्यगुर्भुने ॥ १४३ ॥

विनेतुर्वसुधाचक्रं परवारणयाजिनः ।

आहवे निहतास्ताकं वृत्तया रथकथया ॥ १४४ ॥ अपयर्गः ।

निखिशाच्छिन्नभूलप्रशिरसो विपर्यं दशो ।

अरिमभ्यगुरुच्छस्त्रा कबंधाः शौर्यशालिनाम् ॥ १४५ ॥

अमहिष्णुतया युद्धे चिलातायत्तंभूभृत ।

पूर्वमासदयश्यानामहीशाननुमन्मरुः ॥ १४६ ॥ अकचवर्गः ।

अर्मा मेघमुत्वा ध्योमभ्यामवार्मिहाचम् ।

वयर्पुर्विपुलोच्छ्राया गिरिडंबगोपकम् ॥ १४७ ॥

विनीर्णशर्मग्लस्थं कटकं चप्रवर्तिन ।

उग्रं जुगोप तदृष्टेः सुधमान महाजले ॥ १४८ ॥

वज्रमूर्चीमुखोद्भिन्नं छत्रधारगतांबुजा ।
 तन्सर्वं नृपतेर्वेद्यमकुर्वन् नत्सर्मापगाः ॥ १४९ ॥
 किं केनेत्यसद्वे तीक्ष्णं कथयत्यय राजनि ।
 क्षिनिप्रस्तं जलं यज्ञे नतास्ते तदरातय ॥ १५० ॥ निरोष्ठय ।
 सारवस्तुप्रदानेन म्लेच्छैर्विनतमालिभि ।
 सारवस्तुप्रभानूर्ध्वं रक्तोदा देवता यया ॥ १५१ ॥
 साभिपिच्य तमुर्वीशं रिपुसंभद्रमासनम् ।
 दीप्तरत्नमयं तस्मै प्रददौ भद्रमासनम् ॥ १५२ ॥
 निषधं प्राप्य गोशीर्षचंदनाद्यैस्तदीशिना ।
 अनुजग्राह स पश्चात्पूजितो दिव्यमेपजैः ॥ १५३ ॥
 रक्ता देवी नृभिहाय तस्मै सिंहांकमासनम् ।
 भयाददायि याताय कृत्या प्रागभिषेचनम् ॥ १५४ ॥
 सदेवमानवानीकैरायया वृषभाऽचलम् ।
 सदेवमानवानीयोऽनुतस्थायन्यजन्मनि ॥ १५५ ॥
 तत्रालिख्य समुद्रामशववीर्यश्रुतादिकम् ।
 सकांडकप्रपाताख्यगुहापार्श्वमुपायया ॥ १५६ ॥
 अदायि तस्मै स्त्रीरत्नं नयते गगनेचरैः ।
 अतोऽदायि नतोदारैर्यत्नं दायिने नरैः ॥ १५७ ॥
 पृथनापतिना पार्श्वे मंडलाधिपमंडलीम् ।
 निर्जित्याद्घाटितद्वारां स गुहामत्यगात्प्रभुः ॥ १५८ ॥
 ताघ्नमालस्तमामाघ भृंगारच्छत्रचामरैः ।
 अपूजयन्ममेतोऽन्यैरादरात्तत्र चामरैः ॥ १५९ ॥
 ऊर्जस्वलां म्लेच्छकुलम्य लक्ष्मीं
 निर्जित्य धिभ्यां पृथनेश्वरेण ।
 पतिर्भुवामभ्यपुरं प्रतस्थे
 समुन्नतः किंनरगीतक्रीतिः ॥ १६० ॥

अष्टमः सर्गः ।



पिकस्यरांमोहहमभिमाननं
घनस्तनोसंमितहेमपट्टिकम् ।
मनो मुदं तस्य ततान संततं
नतभ्रयां वण्णयतेः सहस्रकम् ॥ १ ॥

वज्रः पगशीतिकलभसंल्यया
महागत्रेन्द्राभ्यमिता मदीयताः ।
व्यभासयंस्तद्वयनागणक्षिति
समुद्धमद्गमदांपुण्ड्रिताम् ॥ २ ॥

ज्ञानभ्यर्कास्तभ्यसमेन्दयाना
दनाष्टु शोःकृपुतयाः प्रतीताः ।
अनापदीभारंगता प्रतेनु
प्रगष्ट तद्वैरिमन प्रकंपाम् ॥ ३ ॥

मयानमर्मोन्दिमरेण निर्य
निर्णीदितापुष्टिकशास्त्रदीप्ती ।
बभूवतुभ्यस्यतां प्रगावी
छात्रिताता रात्रसद्व्यदेष ॥ ४ ॥

प्रभाविस्त्राभ्यतिस्त्रस्ययं
सुपनवाभ्यादि ष तस्य धीमनः ।
विजय्य नृप्यथा मन मदीभुवा
नयर्ण्य निर्य नि रयो विनेनरे ॥ ५ ॥

वज्रदना नृप्यथाभ्यादि
व विपुदुष्टमगुनधया विपम ।

अष्टमः सर्गः ।

वसंततल्लक्ष्मीगुणसंदिग्धया
जगाम पारंपर्यपाठ्योदितः ॥ ६ ॥

यमप्रवेणं मधुसंधृतधी —
मंटीमुञ्जो दृष्टिगयाप्रयती ।

शूनोऽर्गघनमुदानगीत
भृगायत्रीमंहुल्यमंजरीकः ॥ ७ ॥

प्रयाल्लमारोहदमादिगिष्य —
गुह्यिद्यमानांभुष्याकनाम्भम् ।

अथाप्य विभं नदकारिणं त्यां
जयंगरटं नदबोर मात ॥ ८ ॥

विकारगतीत्यानुभं मनोभयो
भयंनमप्रयन्ति नंधितो धनु ।

वसंतमाचंदकभं तदम्यथा
दिलीगुणोत्पादनिपात्यनित्यता ॥ ९ ॥

तदव्यगृहीतददीदितां गुणे
ननगुण्यगघातुषीपचर ।

भयानतवगानधि बाध संघये
अथाहुं विचरती मनोभव ॥ १० ॥

अथानधि त्वं नदवात्तजाति
नर्यायनाममिगि वाप्यपूरा ।

तनोवि तेषां यदनाच वलोभ्य
तनुदरीलामभिमामनवाम् ॥ ११ ॥

भुव त्वगुदीपयमि कृपादि
मागोलदात्वा मलदातिनेन ।

प्रवासिनां चेतमि चूत ! सन्यं
 प्रजति मूच्छामतिर्यायनस्थाः ॥ १२ ॥
 अयं मनोभूः सहकारमंजरी—
 रुदस्त्रयत्येव लघु प्रवासिनः ।
 प्रियाः प्रियेनेति समादिशश्चिब्र
 तदाश्रयी कूजनि मत्तकोकिलः ॥ १३ ॥
 रजःक्षरन्तीः सहकार सांप्रतं
 समुद्रहेः पल्लवरक्तमंजरीः ।
 मुखौसयामोदलसन्मधुवता
 विचेतसे तुभ्यमपि प्रभुः स्मरः ॥ १४ ॥
 इति स्म चूतं मनसेव जल्प-
 धनल्पसौभाग्यगुणं गुणज्ञः ।
 प्रियासहायः सहितो वयस्य-
 वनेऽचनीशो विजहार हृद्ये ॥ १५ ॥
 नतभ्रुवामाननगंधर्गुभ्या
 मधुवर्तैस्तत्क्षणमुक्तपुण्याः ।
 अचाप्य लज्जामिब्र कंपमाना
 नता वभुवुर्वेनभूमिधल्यः ॥ १६ ॥
 कृतातुयोगा प्रततीपु योपितः
 प्रियैः स्वसंवीक्षणलोलुपक्षणाः ।
 स्वभाषमुग्धाः स्मितमेदुराननै-
 रमूरदश्यंत मुद्गुद्रुमांतरैः ॥ १७ ॥
 व्यधत्त काचित् तरुपल्लवानां
 न संप्रहं नापि तनो व्यरंमीम् ।

१ अत्रं करोति । २ वृत्त व्यायामे इत्यस्य इति । ३ अत्रस्थपुत्रगुणैर्न
 विलग्नो भ्रमरा माम् । ४ लालनया ।

अष्टमः सर्गः ।

प्रमाणा ताच्छब्दं नम्यं
तद्वदमदानप्रबुद्धं गुण्या ॥ १८ ॥

पुन्यं व.याचिद्विनिश्चयं
तदप्रयोधननयप्रयात् ।
व्यधायिवातामिष ममभय
वचिषधामाभिमतं ॥ १९ ॥

ननुपुनं वे.वर्तिर्यपल्लवः
भुजां निर्जा व.भन योजयन्पुया ।
प्रियां व.वर्तीनयपनीं व.या
व.व.व.व. व.व.व.व. निर्वाण ॥ २० ॥

जगत् व.व.व.व. व.व.व.व.व.
द.व.व.व.व. व.व.व.व.व.व.
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥ २१ ॥

व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥ २२ ॥

व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥ २३ ॥
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.
व.व.व.व.व.व.व.व.व.व.व. ॥

अधस्तारोस्तकुसुमैः सुगंधिभिः
बबंध तस्या कर्षरी युवापरः ॥ २४ ॥

निगृह्य केशेष्यथ चापपाणिना
मखीं प्रियस्कंधगतांघ्रिपल्लवा ।
स्वयं सपत्नीजनसंनिधौ बधू
लुलाय शाखाग्रिमभूतमंजरीः ॥ २५ ॥

मनोऽज्ञताऽस्मादपि तस्य तस्मान्
तस्येति प्रादिदय विकाशिवृक्षान् ।
स्वेच्छारनो कश्चन निश्चितात्मा
निनाय जायां विजनप्रदेशं ॥ २६ ॥

बहुप्रसूनाभरणानिरामा
तरुप्रवालस्तरणे निषण्णा ।
उपांत्यवर्तिन्यचकाञ्च काचित्
प्रिये वसंते वनदेवतेषु ॥ २७ ॥

विस्मृष्टवन्यप्रसवोदरस्थिते—
मंधुप्रतानां निवहादभिद्रुतात् ।
मनोरमामोदमुखारविदया
कयाचिदभ्राम्यत सत्वरं भिया ॥ २८ ॥

मनोऽज्ञमाल्यं दयितेन यच्छत्
प्रिया सपत्नी गुणनामचोदिता ।
हिया कृताऽसूयमभूदद्याद्मुखी
तमुद्ब्रह्मंतीष हृदि व्यवस्थितम् ॥ २९ ॥

प्रसूनघल्लीमघलूय कश्चित्
कांतामखीनां निकटं जगाम ।

उद्भूय चास्यामिधानुशाम—

क्षिप्रमथनाम्कतयमिथ प्रियायाः ॥ १० ॥

एतान्प्रतापान्पर्यायमाना—

दास्यांशुजं वमैर्गमिभान द्विरेकान् ।

निवार मारी क्वरमाशुदा

द्वंनप्रभापांदिमगर्गुदान् ॥ ११ ॥

नितंषदेनप्रभृशमपास्तमं

शुजाउदंभयोद्गमैर्गारहाणिनीम् ।

आलोभयन् कञ्चन कामिनी युवा

वसाग्निवृत्तप्रगवप्रहोषमः ॥ १२ ॥

प्रधापयन्तं अपनतदागने

अपेन द्विदोष्यता नितंदिनी ।

एतिचिपाविषयकजप्रतिहया

निघाग्यामार वृत्ताङ्गलिः प्रियम् ॥ १३ ॥

पुत्राहनागनेपुहप्रविष्टः

स्वीयु ररगगुत्तरधवं टरागदा ।

अवापुरधने धतिः प्रध्या

यतिभूमदभूमव्याभिरुदा. ॥ १४ ॥

कपूरधारीग्यधु कीर्तुमं ता

कपा जती तगगणमेव ददा ।

धुधुंष तदयाः परितोहविषं

रन्ध्रः परावृत्तगुस्त्रीधभुधु ॥ १५ ॥

अगाधि अवेध्वरधीतिरजमा

कपूरीधंरजपीधियु विधने ।

निरीत्य नागैर्द्रुमकोटरोन्मुत्तैः
प्रदित्स्वयेवोन्मणिभिश्च शुश्रुषे ॥ ३६ ॥

फ यासि मत्प्राणमप्रा विलोचन—
धियं त्वद्दुन्मुष्यमृगीति कथन ।
प्रयुज्य पाणिं हरिणीमनुप्रजन्
मनं दग्ध प्रियया विक्रोपया ॥ ३७ ॥

तलं मदंघ्रेः कठिनाश्मभूदृषा
प्रतुचते तत्रप्रविलोकयेति ।
निनाय काचिन्नयनोपकंठं
पर्युष्णपग्नीजनसंनिधाने ॥ ३८ ॥

मितप्रहारेण नयप्रसूनेः
केलीविलासप्रणियधिनेन ।
भंजग्मत. किञ्चन दंपतीतौ
यथार्धनामाऽज्ञनि पुष्पबालेः ॥ ३९ ॥

इह. पशामृष्टतृप्तिवन्दनं
प्रमोदयते नृपितामिय प्रियाम् ।
तेना जहामेष नयप्रसूने-
सुंभानमंतगतभृगनिधने ॥ ४० ॥

भूयं तदा शकभार्या तडने
विनोदरीत्याप्रविलोकनेच्छया ।
अतीवदृष्टासनुषेर्देविभ्यता
नमस्तप्राप्त्या तिरोगैःपराजतः ॥ ४१ ॥

बहिर्गता प्रागवतीरहाणा
उत्थायाश्च्येनाधचरितम् ।

अष्टमः सर्गः ।

प्रविश्य शास्त्रामयमं हयानां
तलेष्वदोवेनानीनासेषु ॥ ५२ ॥

बुधेषु वानामविटानिप्रा
ननसुयामाननचंद्रियदाम् ।

लाघण्यनिधोत्थि वृत्तिर्दाम् -
सैमींद्रियदुमगरं शिंभे ॥ ५३ ॥

नंगंपंच गांडुलपर्मि तिपयो
नितंबभागद्विध संगर्भे ॥

प्रियांगुर्नजामनिगोत्तितानया
दानेवंभुपुलाग सुलर्भधया ॥ ५४ ॥

उदात्तोद्योगसंधर्भु -
नगर्भेनोत्त दानेभारगाम् ।

कृतधर्मे चण्डियोदलीत्तया
जगदागाय मजिघाय भुभुजम् ॥ ५५ ॥

मलायप्रवाल्कविह दानया
मरुतिं लज्जामगबंधेनेषु ।

अभिरुच्यतिसि का नियोगदु ख
धुवं तदा नवभूतो यमदी ॥ ५६ ॥

व्यच्छादुगसागगोपयता
गोधोतेताभ्रधरला वाना ।

उत्पृच्छापदेषु बंधुलाग -
गुणप्रतिपत्तदमनति गुण्या ॥ ५७ ॥

विरुच्य वाजार्धनवित्पृच्छता
मामगत् धीर्दिविनागुत्तधियाम्

अतहृणाः कैश्चन चारुवारिजै—
रधोमुखत्वं प्रपयेव संदधे ॥ ४८ ॥

चिकस्यरांभोगहगर्भनिस्तरन्
मधुमतरध्रीमधुरस्वरोद्गमैः ।
उपेयुषम्भ्यामुपभोक्तुमिच्छया
प्रियं जगादेव नृपस्य सद्यनि ॥ ४९ ॥

कस्याधिदंभः प्रथमं प्रविश्य
प्रियेण यक्रामिमुखं प्रयुक्तम् ।
स्यजात्ययोग्यं यत ममरागे—
रन्याराये स्थिधनतामियाय ॥ ५० ॥

एवं किमथापि सुगंधतेति
सुगंधागता कश्चन पंगवित्या ।
तत्रंधगन्धेन शुशुंष यक्रां
निगूढकायं परमा परमाः ॥ ५१ ॥

आदिस्मनोऽसंगमनंतामुधया
न्यभाषिताता तृभूपप्रदृष्टाले ।
तत्रुधनेना मुर्नि रनोऽगये
ननु स्तनीकामदुयासिष प्रियः ॥ ५२ ॥

गृहीतमनः प्रमत्त एव एव
निदन्त्य तस्मिन् वरानच्छदृष्टादिभ्यम् ।
कश्चन काविद् प्रयुनोद्भादिष्टा
प्रकीर्णशोणादुद्धाय संकथा ॥ ५३ ॥

आ चि न म्मम वरदुदीर्घे
प्रियेण वदितुं पत्रं निवेत्तुम् ।
आगच्छदृष्टु कृत्वद्वयमेव ।
वार्तिवद्वयार्दृष्टवज्ञानचामा ॥ ५४ ॥

वर्गानुजे वागधनी दधाना
 यमुध गुंतां नयनामिगामम् ।
 मर्त्यानिवाचनस र्शालयका
 ननमनः पद्यमं शृणावतीः ॥ ५२ ॥

अथन्यमुषीः शिथलमंभना द्रुयं
 दिदधानि मयनि नन्वरेण ।
 विदन्धया संदुबयादरधया
 यभूय नयान्वात्तुर्वाहने नय ॥ ५३ ॥

अनुमज्जहारि ननुत्तपुत्रिया
 ननार वानिद्विषयांनुजानना ।
 जगतेः पुनानामनुलोचय विनिरे
 विनीदयतीं जगदेवनामिष ॥ ५४ ॥

करीण र्शोर्धेण शृणात्पयहि
 वाहय्य संशीघ्रममूर्तिरेका ।

वर्षीय पय्यावयनादगमत्तम्
 वार्ता नान्निवाय हय मियाभय ॥ ५५ ॥

नीलादमरिदिममगवाधवारि
 तीरे ववाहदयमनंगवदय ।

यधुषु नान्नीयरेर्विषये
 निरीय योग्यं पदयोदसंके ॥ ५६ ॥

अनेकवाजस्यव संक्षर्पाहित—
 अथामरीयांमन्याविदिति ।

विनादभुवागतवदिभतिवता ।
 विमान वेर्ती अथ वेद्य र्शोर्धेहा ॥ ५७ ॥

अनोहरीनशुत्तननवेस्यन्.
 --विमने अनेदि वार्ति वीदिनी ।

यभञ्ज तत् कञ्जुमतोऽपि पद्यदाः
 प्रणय जग्मुर्व्यधिका इवासवः ॥ ६१ ॥
 स्तनां नलिन्याः परिहृत्य काचित्
 पत्रेण तोयोक्षिनमुत्तरीयाम् ।
 अर्वाक्षमाणा प्रियमन्वरौत्सीत्
 त्वया गृहीतं क्व नु नस्करेति ॥ ६२ ॥
 रतोन्सवे तामिरिवाभियुक्तं
 नुनं पर्तानां धरहासहेतिम् ।
 विकल्पयन्नाः खलु चक्रवाका—
 खपायनम्रा विदधुः पुरंधीः ॥ ६३ ॥
 प्रियस्य कठं परिगृह्य पीडितं
 भयादियागाधजलव्ययस्थितेः ।
 चकार काचिद्वलयालिकार्यं
 शकुन्तकोलाहलगर्भदुःश्रयम् ॥ ६४ ॥
 नतध्रयोऽप्या नखधर्मगोचरं
 युथानुयोगं व्यदिनेत्यनुत्तरम् ।
 सरस्वत्सद्गुजयोर्व्यतिक्रिया—
 मदुदयन्विदुमवहितं तथ ॥ ६५ ॥
 निर्दिश्य कान्तानुनयानुबंधं
 तरंगशय्यासु रथागनाम्ना ।
 कर्षाणनिभ्राममनाद्यदम्न—
 घनम्लनी काचिद्वदयकान्ताम् ॥ ६६ ॥
 लीलाजनघ्नानकृतहृदय्यी—
 कृषद्रुपकुंकुमर्षिकिलांभाः ।
 चक्रंशर्मयोगहतानुराग—
 माविधकारेथ सरंवरधीः ॥ ६७ ॥

अथः वर्गः ।

बुधवर्गी चक्रप्रथम्य गोविनां
जलाशयांश्चैव जलवेत्तिर्धर्मवत् ।
विनिर्द्वीपैकमेवैवैकमि—
निर्गमार्गाद्यं भूभामिर्धर्म ॥ ६८ ॥

विष्णुपत्रांशुर्गृहमात्मना
नमुदात्तानाम्भक्तित्त्यनाम् ।
निर्गमार्गानामिच्छन् निर्गमं
मृगः न दीर्घं नष्टदीर्घायनाम् ॥ ६९ ॥

उत्पंष्टवर्गः बुधवर्गकोशा
व्याप्तौलभैवादिगणानाम् ।
नाम्भक्तान् नष्टिर्न नष्टवान्
नष्टिर्नानाम् इव नष्टिर्न ॥ ७० ॥

गुणैक नष्टी वसन्तवर्गः
वसन्तवर्गः नष्टिर्न नष्टिर्न ।
वसन्तवर्गानुसंगिताम्
वसन्तवर्गानुसंगिताम् ॥ ७१ ॥

वसन्तवर्गानुसंगिताम्
वसन्तवर्गानुसंगिताम् ।
वसन्तवर्गानुसंगिताम्
वसन्तवर्गानुसंगिताम् ॥ ७२ ॥

वसन्तवर्गानुसंगिताम्
वसन्तवर्गानुसंगिताम् ।
वसन्तवर्गानुसंगिताम्
वसन्तवर्गानुसंगिताम् ॥ ७३ ॥

वसन्तवर्गानुसंगिताम्
वसन्तवर्गानुसंगिताम् ।
वसन्तवर्गानुसंगिताम्
वसन्तवर्गानुसंगिताम् ॥ ७४ ॥

दिनाग्रमाद्यंति परं न जानं—

त्यतकिंनोपस्थितमंतकस्य ॥ ७४ ॥

तनोत्यधिद्वान् मृगवृद्धिमोहं

विद्वान् स्वविद्या मृगतृष्णिका चेत् ।

वितीर्यतां तर्हि विवेकरीषै—

स्स्तुत्यंजलिस्मत्यजलांजलिषां ॥ ७५ ॥

यदि प्रियाम्माद्यदिनाशियचले

गुणच्छिद्रे यद्युपनापसंधियः ।

अनात्मनीनं तन एव तर्हि नदु—

धैव विग्धिग विषयोन्मुखं सुखम् ॥ ७६ ॥

इति स्वनिर्वेदविधेयया धिया

विधाय राज्यं निजपुत्रगोचरम् ।

स भूपतीनां निवहेन सेवितो

वनं प्रनस्थे वनजोपमाननः ॥ ७७ ॥

क्षेमंकरं प्राप्य यतिप्रवीरं

तपः समाधाय नृपप्रवीरः ।

जगाम दीर्घ नियमस्थमार्गे

निस्त्रिंशद्भागमुत्वनुन्यसर्गे ॥ ७८ ॥

रसानलायासदुरंतदु म्

चिरंतनारातिनुदस्य नम्य ।

किरातजातौ गुणयज्ञिनापां

कुरंगनामाऽजनि तुंगकायः ॥ ७९ ॥

धिरकिमात्मा विपुलाद्रिंसंश्रये

समाधिमास्थाय शिलातले स्थितम् ।

अथदयदुर्न्मालितवैरया दृशा

सहन् स पापार्द्रिगतो यतीश्वरम् ॥ ८० ॥

अष्टमः सर्गः ।

अस्मिन्निर्वाणं तनुपेण्य नुस्यको
गुणज्योतिर्म गुणधाराधरं ।

त्रिपालयामास यनि न यानवी
भूर्न वयत्रापारजेन वरिणा ॥ ८१ ॥

बादी न अंजय दि बाजिदामनु
तनुहानिं त्रिपमानरोधुनः ।

आरुध भुंनः दनुसजवंजं
न तस्य दंगुणधरनुगोपनं ॥ ८२ ॥

यदप्रानिदयमाचनेनं
नेनं वयगुला गुनिवचयनी ।

गुनादभेताः नु गुनादमय
विचयकं पापय विं विंजे ॥ ८३ ॥

न तस्यं गुनिभुनोऽपिचरता
केचनेन वयत्रामादुर्जी ती ।

गुनेन ते तीवलयान्वभूता
गत्याधिक विदतिमकेषानाम ॥ ८४ ॥

अथ द्विगुण्योऽपिमाधुगादु
बभूव तस्य वलु वरुबादु ।

पुराविदो यन व ताधिपला
सतल्यपापया व यदल्योऽप्याम ॥ ८५ ॥

अपीतविदावतु धिविचय चनेना
न तस्यतापला व यं प्रवेदिवा ।

अनागतं तन जगद्विगादिता
वराचदं तदुत वय हेदिरे ॥ ८६ ॥

इवा दिगुणधरं वु हेचने
यदुदयला वुने वरुधता ।

उपस्तुता तस्य गुणैरर्मा पुन-
स्नद्वय सर्वं सुपुत्रे मनीषितम् ॥ ८७ ॥

आन्वीक्षिकी घातमधिदः प्रमेय
दीपस्य मूलेय मुरद्रुमस्य ।

हृष्यायदीप्ता च गुणान्विता च
प्रभाकरी तस्य वभूय कान्ता ॥ ८८ ॥

तामुद्रहन्नाहितपत्रशोभां
स्मोपपन्नामविपन्नपत्रम् ।

कर्मदिशामाक्रमितां वभासे
नृपस्य निर्यं नलिनीमियार्कः ॥ ८९ ॥

ततो न तन्या ममभोगमाग्मन-
स्नमेय भोगं प्रणयाद्युभयत ।

प्रवृद्धरागम् च तां न च निर्यं
निजप्रियां प्रीतिमयुद्ध याधुर्या ॥ ९० ॥

उदात्तमूर्द्धा न तया कृतोदयं
दुर्धा दिवाकादहमिद्रमागतम् ।

शतक्रतोः प्रातरर्भीष्टयाहया
दिशा महत्यानुमियोदयाशतः ॥ ९१ ॥

पादापनर्पाभियञ्जक्रमुञ्च
गक्रान्तिसिंहासनमुग्मकमम् ।

न मृभुदाग्मानमनीय दीपं
नृपुत्रस्यप्रसवेन मेने ॥ ९२ ॥

नभ्योदये कान्तकचेरिन्दो -
शंया प्रतीर्षाय भूतं नृपधीः ।

वज्रार मयोपपन्नानुत्पन्ना
कृतप्रणामात्रलिर्जायदोऽहम् ॥ ९३ ॥

अष्टमः सर्गः ।

विभक्तिर्दीप्तोष्णामृत्प्रमाथना
 प्रमाथितमौदितयं वमावताः ।
 अदक्षिमाथानमथैतन्न प्रमा--
 दमुतागाथाः परिचारिका इय ॥ ७५ ॥

यथा च नाथ्य निगूढज्ञानं
 वृषाम्मज्ञानानि निगूढतामगुः ।
 तथा च नाथ्य मदीयविदित्या
 मभोगमंगलभूतेषु यम्यं ॥ ७६ ॥

अज्ञप्रमादादमनुभावा -
 द्यं जलानामानामनु संष्टः ।
 इदं तु विभं यद्यं तन्मथः
 किं वेदलधाल्यया वान्ति ॥ ७७ ॥

मथेय ज्ञानं सुप्रमं दमला
 गादी च गापी च गुणं च तला ।
 विवतीकेयदाःस्थानं विद्यान
 कीद्वान्तधीयुः विद्यायदा ॥ ७८ ॥

तानाममानदमलाविद्यत
 तदम गुणदधीयसीयवे ।
 तान्त्रिवागगापीरं वरत
 गुणं च दीपी च यमुपमंके ॥ ७९ ॥

आनेयमान्धेतिमथेमानस
 तानुचतानामवतामकावत्तम् ।
 एवदुष्टिवाय तामपरमदम्बा
 मनापमान्गीयविद्याय इय ॥ ८० ॥

ततस्तृतीये जरयापहास्ये

विरक्तचेता घयसि क्षितीशः ।

सितातपत्रं स्वसुताय दत्त्वा

यनं तपस्थानदक्षिः प्रतस्थे ॥ १०० ॥

आनन्दने नग इवोदयधाम्नि राज्यं

प्राज्यं तुषारकरविद्यमियोज्जगाम ।

दीर्घं करेषु विदधौ कुमुदानुकूल्यं

किं नु क्रमादपि दिशं न परां प्रमेदे ॥ १०१ ॥

अधिकविनमितायां तस्य तंहेन भूमौ

भिय इय विनिपाता सयंदिग्भ्यो निवृत्त्यां ।

उपरि स परिरेभे पार्श्वेष्वत्युदात्तः

स्थितिमुत्थमधिगंतुं कल्पयन्व्योषत्तदभ्या ॥ १०२ ॥

आज्ञाप्याद्वृत्तपीरपार्श्विनमन्भूर्द्धम्बरात्नाथली

ज्योतिश्चक्रविनातगोपयिकगत्यादारविश्रयः ।

ताराशुभ्रयदाःप्रवेशयत्लाः कुर्ये दिशाः सर्वदा

गीर्वाणायनतक्रमः स युमुजे मूरिभियं भूपतिः ॥ १०३ ॥

इति धीपादिराजगूर्तिरग्निते धीपाश्विनेभरत्वरिने

महाकाव्ये आनन्दराजगामिनन्दनं नाम

अष्टमं सर्गं ।

नवमः सर्गः ।



पूर्वपुण्यपरिष्कारनिमित्त-
धीर्विद्वेकविपुला न भूयति ।
नर्यसंगालनिबेलमं जित-
धीमहं दययित वामादीऽभिन्नाम् ॥ १ ॥

मं पुनजितमहं दिदरायः
नयनिष्ठापनगुडिजगुणाय ।
न्यायसौम्यमनितिविषय
ननुं नगुरगुंनगुणाय ॥ २ ॥

नमयसंगमयश्च तीवरी
क्षितिश्च तिलिपित्तपालय ।
दग्गदिद्विगमद्विपलत्र
वपदसंयमानवतीवरीना ॥ ३ ॥

दग्गदगद्विगमजीतगदः
गुनिशरीति विषयपादिन ।
विशेषानदवि वामनववरा
दग्गदोतवलापमार्तिन ॥ ४ ॥

मार्गेणान्वयविशेषिन विद्या
वैदितविधागुणा गुणदाता ।
गुदिदावेतनवश्च वंन -
व्यादिनश्च दग्गदोतगुनेष ॥ ५ ॥

दाश्चदग्गदग्ग विद्वद्विद्या
द्विनिर्वच्य निर्वोवस्तुवच ।

संयमस्थिरपदप्रयत्नेना
सम्पदस्यविलसद्भिभूतयः ॥ ६ ॥

कामनिग्रहनिराकुलं मनो
षोध्यंत इय भोगनिस्पृहाः ।
सयंतः स्वमनयष्यतामुणं
सूचयंत इय चांशरत्यजः ॥ ७ ॥

तीनपोगपथनप्रयत्नेना
बाहाकर्मपटलोपमायहम् ।
दुर्यहमत्प्रसाकयशायका—
यकमोपतततिविभ्रतः ॥ ८ ॥

भूतिश्रमश्रद्धाधि परीयह—
माहलीदततधोप्ययिरुथाः ।
गावर्गनिधिनिरुगणा गगुम्—
साहता इय लघू तितीर्ययः ॥ ९ ॥

भूयतिर्यतिममूहमुल्लसद्
किंबभुग्मधातिर्यन्ताम् ।
तत्पाने बुदमतिपुस्कृत—
प्रधयो वचनमिग्ययोगत ॥ १० ॥

गुहबोध इत्यप्रवेदानं
माथितानवदिकभुनोदधेः ।
स्वलाचायसुपटो इत्यनने
यन्तु विनिर्दिगाशमविम विम् ॥ ११ ॥

मयमीद मम यन्तुगैदाये
इति नेत्र न विर्येवि वदममम् ।

मत्तुर्वाविमयनामने जना
ममविमममनिगुहवागिना ॥ १२ ॥

एत्रिमेतद्विभेदंभृतं
 त्रिभुवनमिदं तद्विभक्तम् ।
 तत्रार्थं मुनिर्जित्त कथयते
 भक्तिमज्जलमनीपितप्रदम् ॥ १६ ॥

अथनु या तद्दृशाः पुनो मनाः
 केचनेन भूयते त्रिभुवनाः ।
 ईदृशेषु चक्षुषाणि ज्ञायते
 लक्षणा च तनु त्रिभुवनायमे ॥ १७ ॥

कामधेनुमिद्य त्रिभुवनायमे
 कनोमनादि वातुमयसीभवम् ।
 त्रिभुवनायमेवैतद्विभक्तम् -
 त्रिभुवनायमेवैतद्विभक्तम् ॥ १८ ॥

तत्रैवतनुमयमयिभेदतः
 तत्रैव तनुमयमयिभेदतः (त्रिभुवनायमे) ।
 किं ज्ञायते तद्विभक्तम्
 भक्तिमेव तनुमयमयिभेदतः ॥ १९ ॥

किं वा किं तनुमयमयिभेदतः
 तत्रैव तनुमयमयिभेदतः (त्रिभुवनायमे) ।
 किं तनुमयमयिभेदतः
 तत्रैव तनुमयमयिभेदतः ॥ २० ॥

तत्रैव तनुमयमयिभेदतः
 तत्रैव तनुमयमयिभेदतः (त्रिभुवनायमे) ।
 तत्रैव तनुमयमयिभेदतः
 तत्रैव तनुमयमयिभेदतः ॥ २१ ॥

तत्रैव तनुमयमयिभेदतः
 तत्रैव तनुमयमयिभेदतः (त्रिभुवनायमे) ।

बंधुरेव स पुनर्मनस्यनः
संधिविप्रहयिषी विधिन्मते ॥ १९ ॥

द्रव्यकृत्कसमत्ययोजना
युज्यते न जिन नित्यवेदमसु ।
तादृशो हि सुवियेचयंभदैः—
न तेप्यरुतकत्यनिर्णयः ॥ २० ॥

संति ते सुरयिमानसंधिभाः
सर्वलोकनिलये त्रिनालयाः ।
भद्र्यकर्मरुतनिर्यगृत्तयः
प्रकृत्कर्मणिनिनिवर्णयः ॥ २१ ॥

यत्र तेन भगवद्भुक्तानताः
संति शामरविमानसंलयः ।
दीप्तदीप्तिमयसंहलोदरो—
द्राग्निभागयनविबभूषणाः ॥ २२ ॥

इत्यनुत्तयगमुद्रसंभयं
तस्य वागमृतमुद्यैरागतिः ।
आदरातिरिचुत्तयः कृत्तैः
स परा परमनिर्णयः पदम् ॥ २३ ॥

प्रातनुयति नन प्रभृत्तय
तत्रतया प्रहृतभामोपदे ।
अध्यंसंभ्रदिशदोपरीत—
प्रभृत्तयः त्रिनयः प्रहृतयः ॥ २४ ॥

नत्र यदंनिते नति प्रजा
सगो निर्विनिर्णयः ।
निर्णयः नती हि मया
इत्यन्यः प्रहृतिः प्रहृतयः ॥ २५ ॥

नवमः सर्गः ।

पुण्यहृन् लोकायमहन् महतीना
गण्यमेवमुलगादिगण्यं ।
अण्यतां युधत्सु कथं हि वा—
पुण्यमेवमना कथाविनि ॥ ३६ ॥

वेदगुण्यमुदण ज्ञापना
क्षत्रमेवमते कथागुणा ।
नेन धेनयगियाण्यदिने
नयेना गुण्यगयाण्य यज्ञा ॥ ३७ ॥

गुण्यगयाण्यमतेगण्यंनिने
ने प्रति प्रविश्यु दिगणना ।
इतिगण्यगयाण्ययण्य
गयाण्यगयाण्ययण्यगयाण्य ॥ ३८ ॥

भूमिगुण्यु न विमान्य ग्यादिम
द्यामनेन कर्तगीमभूमिक ।
गुण्य द्वेयतनुतिगण्यु विम
नतनुगुण्यु द्वेयतां ॥ ३९ ॥

गुण्यगयाण्यगयाण्ययण्यगयाण्य-
गयाण्यगयाण्यगयाण्यगयाण्य ।
द्यामनेन लब्धु लण्य नवयता
विद्ययाण्यगयाण्यगयाण्यगयाण्य ॥ ४० ॥

नवय गिण्यु विद्या यद्या
विद्यु नित्याण्यविद्युयण्यगयाण्य
आदरे न यद्यथाविद्युयण्य
यद्यथा विद्युयण्यगयाण्यगयाण्य ॥ ४१ ॥
यद्यथा विद्युयण्यगयाण्यगयाण्य
विद्युयण्यगयाण्यगयाण्यगयाण्य

आदरादिकमलोकयन्पुरः

स्फारचारुमुकुटोदरे वपुः ॥ ३२ ॥

इंद्रनीलरुचिरोमविस्तरे

मस्तके पलिनमूचयः क्वचित् ।

तेन संदृष्टशिरे निशामय—

स्यामिकास्पृश इवेन्दुरदमयः ॥ ३३ ॥

तन्निवद्धपलितांकुरं शिरः

प्रत्यबुध्यत स बुद्धिमत्प्रियः ।

तत्क्षणे विदलितं जरद्वयः

कालसर्पदशनांकुरैरिव ॥ ३४ ॥

इतोऽमन्यत जगि शिरम्ययं

लग्न एव सितवालर्लीलया ।

उल्लसन्मदपरिद्विलासिनी—

हासखंड्ररुचियंधुपांडिमा ॥ ३५ ॥

मुंच मां तरुणि भोगलालसे

तावदंत्ययसा विरुपकम् ।

यावदेव न जुगुप्सया त्वयि

स्मेरचारुवदनो यधूजनः ॥ ३६ ॥

यज्ञबाहुमभिषिच्य स क्षिते

रक्षणाय तनयं ततो नृपः ।

निजितप्रसवकामुंकेर्षुतो

राजिमियंतनिधाममप्रजत् ॥ ३७ ॥

निर्विमुच्य दलितस्पृहागुण-

प्रंधिरंगवहिरंगमंडनम् ।

आददे न निधिगुप्तिसंनिधा

योधगोचरतमोपहं तपः ॥ ३८ ॥

नयमः नयः ।

वर्षेनिकृतस्यैव नयत -

नयमूलेः सुविद्यायाः नयताम् ।

अन्यदेव सुविद्याभूय न -

नयमिणां न न नययतेनः ॥ ३० ॥

देवतः प्रविधिना ननुक्त

वर्षेनियंतामयामथो नृनिः ।

अंतगामानि नयमिभाषना -

नयित विद्यायतेन नयना ॥ ३० ॥

भावयत्तस्यदर्शनं

नियताः प्रलयमंजगुणतम् ।

अंतगामविज्ञयादयामम्

प्रत्यगात्मगुणन्यायं नयनाम् ॥ ३१ ॥

वसव मीमांसानं नुम् -

इवमन्तः नयमानादिभ्यम् ।

आधिष्ठानानि नय नयिनी

नयतीति नययते चिन्ता ॥ ३२ ॥

नियतेभ्यश्च नयितव्यं नयनं

नयितव्यमिति नयनानयनाम् ।

नयितव्यमिति नययते

नयनानयनं नययते ॥ ३३ ॥

नयनानयनात्तु नयितव्यं

नययते नयितव्यं नययते नयुम् ।

नययते नययते नययते

नययते नययते नययते ॥ ३४ ॥

नययते नययते नययते

नययते नययते नययते

सिंधुकेलिच्छतये कदाचन
व्योमवाहितविमानपंक्तिभिः ।

तेन देवनिघहेन गच्छता
जंगमेव नगरी विनिर्ममे ॥ ५८ ॥

वारिधौतरसितो विभामुर—
स्त्रीरुनो जलविलासक्रेलये ।

व्योमतः स निरमज्जदेकदा
वारिवाह इव विद्युतावृतः ॥ ५९ ॥

अर्धतुयंसदरन्निमंमितं
भ्यासि मासि दशमे ददद्वपुः ।

सोऽन्वभुंक्त दिविजेंद्रयंभयं
विशतिविमलर्धागदन्यताम् ॥ ६० ॥

तस्य पत्नरमहस्यविशति —
व्यस्ययम्मृतिगता मृताशिनः ।

सन्निधानमगमहुणोदधे—
रत्यमारभयमागगायधिः ॥ ६१ ॥

तत्र सत्ययमरे स लीळया
येपतेस्य हरिविष्टरं हरेः ।

धर्मतीर्थमथतारविष्यत—
स्तस्य संशदिय पश्चिमं पथः ॥ ६२ ॥

तथथायदवथाय संभ्रमा—
दामनात्मपदि सतकं गतम् ।

ते ननाम जयकारण्युयंकं
मौलिबृटनिविहादितांजलिः ॥ ६३ ॥

तत्प्राणभरणाभात्रसंगता
संज्ञगाद मुनिनां वृमारिषाः ।

द्वेषमास्यदृष्टमोत्रदीपका —

धीवरासलजहासवाधयः ॥ ३५ ॥

मायिनी भुयसमनुमानं

मय्यांतीव निरुवायमाह निव ।

भक्तिर्बभूवमुपाधयमय्यं

विशवेदेमनुनेतिम प्रियाम् ॥ ३६ ॥

आरयामास्यनेमवधिया

दृष्टेजसममया वर्यामसा ।

अंस जसुवमियागलागिलाः

वय्यांती मवमयागलागिला ॥ ३७ ॥

अमवादायदुपानतीदती

लागवेद्य वल्लु दिवययोपिल ।

वय्यामवमुपल विगिलागिद्व

वर्त्याममागमवमयादेद्वला ॥ ३८ ॥

वय्यामवपति वर्यामला कुपाम

दिपका वर्याम मयीवरा ।

वीरति वय्यामये ति लायला

दीवदासव वद ति धी गुला ॥ ३९ ॥

वेदास्य वय्यामलागमया

वायमेक वसुधा वये वया

विवाधिय विवाधयकुला

वेतमी व वर्याम जसवम ॥ ४० ॥

वय्यामो व वद्विष वसुना

वय्यामो वर्यामो विवाधय

वेदिविवाधयविनेव वर्याम

व विवाधयवुवादा वय्यामो ॥ ४१ ॥

मुख्यसौरमसमीरसंगत—

स्पंदितादरसरगपल्लया ।

निर्मलस्मितसुधानयोद्गमा

स्पन्दते मधुयनधिया यधुः ॥ ७१ ॥

मालिकातरलनेत्रयुग्मनि—

प्लूतनिर्मलमयूखलेखया ।

सिंधुयारकुमुमायतंसन-

मंथनामिव कणोति कर्णयोः ॥ ७२ ॥

आलि पदय मृगलोचनाकुचौ

तारहारविषयलेदिनौ तर्कौ

कौस्त्रियंभुरपृहत्तरंगिणी—

यक्रयाकमिधुनायतायिमौ ॥ ७३ ॥

कोमलाहृतिमृगोल्दशंकया

लील्योन्नमितकंडुकंदलाः ।

सुंदरीकरनलख्यपोमलाः

केलिहंसाशिशयो निहल्यमी ॥ ७४ ॥

मानि तन्यधि तितंयमंहुले

शाप्रमध्यभृशुच नतसुभः ।

पीयस्कनयकनागमुद्गगत्र

लिमप्यमिव मूलपुंदिनम् ॥ ७५ ॥

प्रहणम्यलिसनात्रमंशया

बालद्रेगप्रतिता विराजने ।

विश्वमेनमनुत्रेभ्यसंगता

त्रिद्युता प्रपनवीकनख्यती ॥ ७६ ॥

यकनन्दनचभोगलक्ष्मि-

सुन्दरमयुगले मृगीदश ।

कामसंभवात्तद्वैश्वानरिणः --

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमं ॥ ७७ ॥

न स्थियं तुलनुत्तरगोपना

ननुत्तरं न क मात्ताव तादस्यै ।

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

यादयोः प्रथमं क तदियम ॥ ७८ ॥

क तिमिर्वात्तं तिमिर्वात्तं

निर्मितांश्च तुलितं तुलितं ।

न प्रथमं तदयोः प्रथमं

तदयोः प्रथमं तदयोः । ७९ ॥

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः । क तदयोः

क तदयोः प्रथमं तदयोः

तदयोः प्रथमं तदयोः । ८० ॥

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

तदयोः प्रथमं तदयोः ।

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

तदयोः प्रथमं तदयोः । ८१ ॥

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

तदयोः प्रथमं तदयोः । ८२ ॥

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

तदयोः प्रथमं तदयोः । ८३ ॥

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

तदयोः प्रथमं तदयोः । ८४ ॥

इति शर्वाण्यमुनिं प्रथमः

तदयोः प्रथमं तदयोः । ८५ ॥

अंगुलीइलपिलामघट्टना-
लीइलालकलपल्लकीगणे ।

रागराजमुदपाइयलरा
पंगमं युयतिचिभंजनम् ॥ ८४ ॥

किन्नरप्रथितपंधुबंधु-
प्रामरागकगिरांगहाण्या ।

अन्वयाभिददये नतध्रुये
गुधया रचितलापलीनया ॥ ८५ ॥

रात्ररात्रतिगमानुपधिनि
चभुर नभगि निमिनामरेः ।

हेमपुष्टिभयभन्त्यागण
वप्रभाकगिगिता रिशोइगिता ॥ ८६ ॥

विभारिकप्रकटपाइक.कालि-
प्रकट्टोत्तमिगतपाइपासलः ।

निष्पन्नमणिमहीनिनेगुणे
ध्यामवागिचिदयेअरात्र ॥ ८७ ॥

अग्निवाचिचनविगानिद्वना-
नेकप्ररविमयक. वय ।

प्रकथा ननुभूनामनिनिकं
निचनेनरिनि विविमया मारि ॥ ८८ ॥

आठभानुनिचरतीइइनीयनि-
नीयप्ररवहया रकारिने ।

आनुनानु रकारि नारिच
अंमरे इनिचकाइकुंरिच ॥ ८९ ॥

आसुगतावनवारिमौलिविलसत्पादारविन्दाय धै
 रात्रे तत्सकलं न्यत्रेदयश्चः सिंहागनार्धोसिता ।
 तस्य सोऽप्यऽयदज्जनस्य भयेऽपुत्रत्विलोकीपतिः
 सा नानंदमयाय मन्त्राणामभूद्युयत्रमोदभिया ॥९९॥

इति श्रीपार्वतीराजगुरोः श्रुतिने भक्तश्रुतिनेभ्यन्तरिते

म १ क ७१ दिग्नेयिगुदिन्दरणं न म

दशमः सर्गः ।

—११—

अथ दिविऋषयुषश्चिन्नवोष्टं
 ऊटस्रियान्नासुपिनमाननेष्टम् ।
 जयतन द्वापला मृलोचनसुः
 स्रनिमिष मात्मानि निगूढवर्तिनम् । १ ।
 जभियमसनि जगद्गी मृमाप्री
 निजगुदः निजगामिवालयवामः ।
 उपनतलनुपमोदयप्रतीमा
 दुष्यति हि वचयनमापुर्द्वयवामः । २ ।
 आत्मानमिष या वचमापदाते
 वणुवणुषे यमिलगुणो ममात्
 जिनपरागुदरे लदा ममीते
 वचमामिष वीनिगुणामावेरमहे । ३ ।
 जभिलनजरावामा-वि ४ म
 वर वचु विमो म निरु ममावमृष ।
 मविजवद गुपदयष्टि मा ५
 अचमवर्तन लधन विम्वरेणम् । ६ ।
 मतिवमादधि लदपु म वच
 वचममवचमः वीलनीलधाम् ।
 मयति हि अ ममावर्षक निम्व
 निवर्ति यमावर्षि लाम य वचमवर्षम् । ७ ।
 वृत्तभुजमः वीव वचरेव
 वचममिना वचुषे जगत्-द्वयम्
 अचमवर्षिनेद मापुठाम
 वपु निरवर्षमवर्षावृत्तवर्षिम् । ८ ।

उपनतमुरामुप्रसन्नधिकं
 निवमितसर्वरुजः कणानुबंधम् ।
 जिनयरजनने जगत्समस्तं
 क्षणमिय मुक्तमभूदमुक्तरागम् ॥ ७ ॥
 नयपरिमलसौरभायकृष्ट -
 स्रमदलिमेचक्रिताग्मरुत्पथामात् ।
 अविरलयहला गुरदुमाणां
 नृगतिगृहे निषयात् पुष्पवृष्टिः ॥ ८ ॥
 जय जय भगवच्छिनेन्द्रवंद्र
 त्रिभुवनजीयतिकायनित्यबंधोः ।
 भुतिपथमधुनागच्छतीये
 गगनतले गगले समुत्सवये ॥ ९ ॥
 जितजननमयेत्य रेयराजः
 प्रयादर्याडतया महामवेष्टे ।
 रुद्रितमयमयगैना प्रतश्चे
 निद्रितनिधेदा तयाणिपप्रकोदा ॥ १० ॥
 गणितरमद्रुमप्रगुणे -
 अन्तरिमगयेनमुद्रितान्निद्राराम् ।
 अमरुद्रितारामहये
 वेनमिष जंगमवेवं वभूव ॥ ११ ॥
 अत्रिमिषमिषुयगात्रिमिषांति -
 विषदनिप्रमगावदद्विष्टम ।
 अन्तरिमगयेनमुद्रितान्निद्राराम्
 गगनमलनायमये ज्योत्सव निधवम् ॥ १२ ॥
 त्रिष इष गगतो रिमकप्रान्ता
 कृतगवर्गविमिषांतिरेऽयं ॥

दशमः सर्गः ।

प्रविष्टश्चक्रेऽर्धमप्रधानं
संगमसरोवरमग्नौपारधैः ॥ १३ ॥

प्रविलसद्मरोट्ट पद्मगाण—

सुन्दरमात्रिमितीतिदीप्तिगङ्गा ।
सधुर्मिष विनिद्रश्च द्वेषणीने
किञ्चालयिने रनिचं नसो विगतो ॥ १४ ॥

यनपशासुसुभोदनाचर्षीः ।

बनवदादिल्लससांललीति ।
रतिगभूतया दधे दिगीचो
सूयतिगुणप्रतिविचविगतार्थी ॥ १५ ॥

सूटव शिखराचरापर टा
निवदागर्णविनिधा तदासुनाः ।

जलधामिषु वं विविर्भूतिन—

क्षणा शिखरासुलीच समुक्ता ॥ १६ ॥
दल्लिगव रश्च सुलभा गभा
द्विपरलानामादिच प्रकुर ॥

अजलपरजगत्कारणया
सुरयथाच ईगविधम जलगा ॥ १७ ॥

अधिरलमयतीट्टिगधिभागा
रयचरिता अलधीनधेजयत्या ।

ततसुलगांभोपलभतीये
विभातय इवादिबभूवतीट्टीया ॥ १८ ॥

एयाचयनाजादपी चर्षिता
द्विदित्रपसेरुसुसुपदुबलगा

प्रतिबुधराचरकाली दुभा
विधि नदिहलरुमकोलदुरका ॥ १९ ॥

सुदुःखसमासेन कल्पस्यते

सुदुःखस्ये कल्पस्यति तत्र तेति ।

एतन्नयनस्य नयनान् ॥ २० ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २० ॥

प्रथितव तत्रतेनयेद्रदयता

विदयत इत्युत्पत्तिर्गतात्सु ॥ १ ॥

प्रथितव तत्रते ॥ १ ॥ तत्राह —

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २१ ॥

सुदुःखस्य नयनान् ॥ २१ ॥

सुदुःखस्य नयनान् ॥ २१ ॥

प्रथितव तत्रते ॥ १ ॥ तत्राह —

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २२ ॥

प्रथितव तत्रते ॥ १ ॥ तत्राह —

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

स्तिर्गतात्सुमुखासदा शशी तत्राह ॥ २३ ॥

आदिप्रमुखाश्च मानसिध्या
 व्यथयिष्यथ मीं त्रिंशं वर्षां मनुजैः ॥ २६ ॥
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 प्रमुखासुखं हस्ततां ह्यादिमेवम ।
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 मियति जलस्य भीमसुखं न ॥ २७ ॥
 अहंयत्त वदुःखस्यमभुवा
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ।
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं न ॥ २८ ॥
 जलस्यवदुःखस्यमभुवा
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ।
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ॥ २९ ॥
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ।
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ॥ ३० ॥
 अहंयत्त वदुःखस्यमभुवा
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ।
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ।
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ।
 वदुःखपरिधादिनीवदुःखं
 मियत्तस्यत्ता वदुःखं विवया तांमेवम ।

अधिरलप्रयत्नानपप्रशुभ्र—

त्रिदशायः स दिव्याकमां प्रयाहः ।

स्वयमिय जिनदेयमज्ञनार्थ

गिरिशिखरं प्रयया पय पयोधैः ॥ ३३ ॥

प्रतिकलितनिलिपमूरिकोला—

हलजयकारपुंद्दरीमुखौघैः ।

गिरितुतुमुकुलस्यलाज्जपाणि-

भुवनगुहस्लवनं खलु व्यचक्ष ॥ ३४ ॥

पृथुमणिमयपांडुकंचलाभ्य-

प्रधिनशिलास्षितरत्नमिहपीठम् ।

जिनपतिमधिरोप्य देवराज—

अपनविधावधिकोस्थमभ्ययुक्तः ॥ ३५ ॥

अमृतमुपनिनीपयो नगेंद्रा—

दमृतभुजः सविलासमासमुद्रात् ।

अधिरलगतथो नमस्यभूधन्

दहनरसेतुबंधतुल्यलीलाम् ॥ ३६ ॥

किमगमदमृताणं वस्थमत्यां

दिविजगिरिं दिविजैरुनोपनिन्ये ।

अविदितमिति केवलं द्युलोके

नमसि बहनमलस्तु दुग्धराशिः ॥ ३७ ॥

प्रविकचकुमुदैरिबोद्धमासे

पयमि तरत्तरलैस्तु तारकीधैः ।

तदुभयतटवृत्तिभिन्निस्तु लैमे

प्रधिततर्शाकरभूरिविभ्रमधीः ॥ ३८ ॥

यदुबहुमुखयाहलीदृष्टैः

कनकघटैः स कृपाकपिविरेजे ।

इतिमः सर्गः ।

भुजबालद्विनोददीपियां ।

वृभुजसदृशममदमृगिमां : ॥ ३० ॥

त्रिमयसिमां इतिमयस्य

वृभुजसदृशममदमृगिमां ।

परिमलपनिमानदितनां ।

वृभुजसदृशममदमृगिमां ॥ ३० ॥

प्रतद्विषदायनीविलोम

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ।

त्रिभुजसदृशममदमृगिमां -

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ॥ ३० ॥

वृभुजसदृशममदमृगिमां

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ।

वृभुजसदृशममदमृगिमां

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ॥ ३० ॥

वृभुजसदृशममदमृगिमां -

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ।

वृभुजसदृशममदमृगिमां

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ॥ ३० ॥

वृभुजसदृशममदमृगिमां

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ।

वृभुजसदृशममदमृगिमां

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ॥ ३० ॥

वृभुजसदृशममदमृगिमां

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ।

वृभुजसदृशममदमृगिमां

इतिमयस्य प्रमंल इतिममृगिमां ॥ ३० ॥

अतिगुरुगुणजिनभक्तिगर्भा

भृशमभृतः स्नयनोदकायगाढाः ।

अधिरुतजलकेलयः स्वकोला--

हलयधिगन्तु दिशस्तदैष चक्रुः ॥ ४६ ॥

सिस्वियरममिस्विय देषमेघं

श्रिदशयतिः स बहुरुतप्रमोदः ।

जिनगुणमणिचंघचंघरोयं

भुयनगुरोः स पुरोऽमरो ननने ॥ ४७ ॥

अगणितयुजिभूमिरीषेशाला

मदृदमरीः स रत्नगुणामहरीः ।

मृदुदरममनदृदमंद्रमर्गैः

कृष्टिशभाञ्जलतीष कल्याणुषाः ॥ ४८ ॥

उगतमद्विजितांगनामनोज --

कामगृधुरोयगुणामुणप्रणारीम् ।

नदृदनिमिषनमृदपृष्टेय --

स्तिमममद्विष्णुशियागलध कृतः ॥ ४९ ॥

अनिनिष्मनिर्गोविधाय गृता

मलिल्लगुरोःमद्विषोःचर्षीः ।

मुकुटिशकस्यचकानाद

कनुभिमनुगणपरी हरिश्चकार ॥ ५० ॥

अथ त्रिन सयनोपकारगार

विद्विषनयागमद्विष्णुशियागलध ।

अथ अथ त्रिननिदृशादिगाल-

स्तिमनिगमये ॥ ५१ ॥

इदममदृदनादिदमये-

प्रपत्तमोर्द्विनमद्विष्णुशियागलध ।

कथमिदं भगवन्मम प्रसाद-

इति ममूनेऽपि त्रीणि हस्तेन ॥ ५० ॥

दिव्यपुष्पाङ्गायुधं नृणां नम-

स्य मम दृष्टेः त्वं त्वं प्रसादम् ।

इह कृतममनानुभवाभ्याम्-

ममूनेऽपि त्रीणि हस्तेन ॥ ५१ ॥

विभक्तिं त्विदं मम त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ।

अभिमानं त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ॥ ५२ ॥

अभिमानं त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ।

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ॥ ५३ ॥

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ।

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ॥ ५४ ॥

अनुभवान्मम त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ।

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ॥ ५५ ॥

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ।

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं

नृणां नमः त्वं त्वं त्वं त्वं त्वं ॥ ५६ ॥

तिनश्चजनकप्रमोदहेतो—

मंहिमपरं दिविजाः पुनरिंधाय ।

पुनतिनतमना दिवं प्रजग्मु—

मंलिमुपुट्ठच्छयिमेचकीकृताशाः ॥ ५९ ॥

प्रतिदिनममरोपनीतभोगा—

तनुभगतः परमेश्वरस्य तस्य ।

कतिपयदिवसैर्गुरुदस्य घालयं

तदनुभवा ययसा समुद्रभूवे ॥ ६० ॥

हिमकण्ठगुणमंभुजोगमाशं

पुनरिंधायतयादुपुट्ठमध्यम् ।

पृथुतरयित्तयाद्विगागपक्ष—

स्वस्ततमादरुणे प्रकाशकचयम् ॥ ६१ ॥

अतिगितरधिरे मगोजगंधि-

स्वपमृतपमंजले मन्दादगोदम् ।

प्रसवत्तनुमत्तशर्णोपपन्नं

प्रथमकर्मदमनं मनोजर्कातिम् ॥ ६२ ॥

कुलगिरितल्लूमिभंविषंधं

नरुपयिंहास्यविरिधमं जलेन ।

वदुपय परमेश्वरेण वधे

जनमत्तदस्मगोजगान्नयिवम् ॥ ६३ ॥

इवमकथयदुक्त्वा मृगानां

मदति मने स्वमुनेषु परमेश्वरिणि ।

त्रिदिवसमिहनां त्रिदि मदुप-

पुनरुपयिंधायमोदिनं कुमारम् ॥ ६४ ॥

इवमकथयित्तेन वेषं वदित्वा

मूर्तिपूजनां वदतीमंवा ज्योतिषि ।

निवृत्तानामिन्द्रियनि-

विगतदृष्टिना नयदृष्टिः ॥ १० ॥

नयचमं निद्राय देव

नयसदृशी न।केन भूय दुःखम् ।

नयिदिविद्वानि वृत्तानि

निकृष्टिपुत्रेय नमं मनुष्यभूयम् ॥ ११ ॥

नयसदृश नयवेदी

न भवति नय नयं न योगयोगी ।

नयविद्ययोगनगीतार्थ

विद्यु नुपभोग नमं भवेत्प्रयात्नम् ॥ १२ ॥

नय न नमं नदेति नयः ।

नय कर्त्तव्यति नदयान् नयनीयम् ।

नयचमिं धरे प्रये

नयचमिं नयानिवासां नयानि ॥ १३ ॥

नयचमिं पुगे नयुगे

नयनित्ति (ति नयान् नयानाम् ।

नय नयित्तानयनयनय

नयानि नयानि नयानि नयानि ॥ १४ ॥

नयनयति नयानयनीयं

नयनित्तानयान् नयानि नयानाम् ।

नयानि नयानि नयानि

नयानि नयानि नयानि ॥ १५ ॥

नयानि नयानि नयानि

नयानि नयानि नयानि ॥ १६ ॥

नयानि नयानि नयानि

नयानि नयानि नयानि ॥ १७ ॥

क्षणदर्शनपूर्वमालितार्थी

स्मरविद्यया तु तमेव भावयित्वा ।

अपसृतमपुनयिंलोकयन्ती

निजमतिमेव निनिन्द कापि मुग्धा ॥ ७२ ॥

तदनु गहदर्यय सौधशृंगे

विषमतले पदसंधिमादधाना ।

इत दृतिभयचोदिता मर्खाभिः

कथमपि काचन चेतनां प्रपेदे ॥ ७३ ॥

विकसितवदनांबुजा वराच्छ--

स्फटिकगृहम्य शिरोगतानतांगी ।

कुचनटपरिभाष्यलेख्यपत्रा

नभसि गता नलिनीव निर्वभाषे ॥ ७४ ॥

निजगृहगुहगस्थिता गवाक्षा—

गननृपनंदनदर्शनोत्कटदृष्टिः ।

रतिरसदयतानुगोधमेका

न कस्यचिन्मर्यादं बुध्यतेस ॥ ७५ ॥

दशमः सर्गः ।

दृष्टिनिघमसमागुपल्य दृश्यो—

निति निजगाद् विगावि दाष्टमेवाम् ॥ ७८ ॥

मद्वग्निमुपव्यष्टेमापदं

वमालदना प्रतिगिवितारा वाशिनम् ।
वनिगतिवर्चिर्नैर्दिनीयवायि

वेज्जमित्य मेम वमं वामावंगेज्ज ॥ ७९ ॥

अपमृतमवि सं निसेवयन्ती

मृपनुतमेष वृत्ते विधीयमानम् ।
कागदात्ममयवन् वज्जनीभि

वनिवज्जतममयतामिवाभिरव ॥ ८० ॥

इति वृत्तमासीत् देवसेन

व वमगुपल्य दृष्ट्या तपस्यं तम् ।

वृष्टिमिदमगदवा धेन विगा -

वगमिदवृष्ट्या वि वमवृष्ट्या ॥ ८१ ॥

वव मदममयीत् तप्य वीप

ववदवमि वृष्टिमिदममममि
अनुगितमिदममम वववदवद

वृष्टिम् निमित्तं वीपद्वयमिच्छन् ॥ ८२ ॥

मममित्तवदवा वममद्वयम्

वृष्टममम वेममम वृष्टमममम

अवमममममममममममम

वमममममममममममममम ॥ ८३ ॥

वमममममममममममममम

वममममममममममममममम

वममममममममममममममम

वममममममममममममममम ॥ ८४ ॥

प्रणिहितमनसो गुरुस्त्रयेषु
 व्यधितत्रमो भुजगो विपत्तिकाले ।
 अपि लघुगणनेषु देवदेवो
 न हि कुरुते स कृती कदाप्यथनाम् ॥ ८५ ॥

परिगतदहनं व्युदस्य देहं
 भुजगपतिर्भवने यमूय देवः ।
 समजनि भुजगी च तस्य देवी—
 षडलङ्कोमलनीलनीरजाक्षी ॥ ८६ ॥

पद्मावती च धरणाद्य कृतोपकारं
 तत्कालजातमवधिं प्रणिधाय युद्धा ।
 आनघ्रमौलिकचिरच्छयिचर्चितांगि—
 मानचंतुः सुरतरुप्रसर्गजिनैर्द्रम् ॥ ८७ ॥

लक्ष्मीधाम धीजिनघमांदपि याह्यः
 कायहेःशादासुरपाये स तपस्वी ।
 देवो जातः ज्ञातिमयामीदपि नास्मा
 भूतानंदो भुवनदेयेष्वसुरेषु ॥ ८८ ॥

धीमानूर्ध्वितशामनो जितविभुः धीधारणस्यां वसन्
 तसद्भासितमयंयन्तुविमरन् रुद्राण्यसौवपुतिः ।
 नागैर्द्राद्युपनीतनित्यथिलमद्रोगोपभोगायहो
 देवः सप्रजयोद्यकार सुचेरं पित्रोऽस्य नेत्रोऽस्यम् ॥ ८९ ॥

इति श्रीपार्श्वनाथचरितम् ।
 महाकाव्ये कुमारचरितव्याख्यानं नाम
 दशमोऽध्यायः ।

एकादशः सर्गः ।



धीरुपर्यायनधम्या कस्या एवे महीभूम ।
 याराणमीमुपानेपुडां तर्धे जिगीववे ७ १ ॥
 विधाहसंगलेऽयद्यं विध्यतेनं कुमुदति ।
 कुमारांनिबन्धनाय ज्ञान्यायनममपरीत ७ २ ॥
 विदुःसज्जानदेहण तव किं नाम कथ्यते ।
 किं तु यास्यात्प्रपन्नामप्रयत्नेहरीध्याः ७ ३ ॥
 शिष्यामानंदकपकवदभ्रानंदन आगालः ।
 कर्तुंभोगोचिने यत्तुविताने कल्पयादः ७ ४ ॥
 अतिशयेन धासां किंते विलसो यथा ।
 अथवा मलयः किं न यागानादृश्यानिष्कवाः ७ ५ ॥
 तर्धेव कुम्भभाषार्थं हीपितं किंमिह तुलसु ।
 प्रदीपं जीवालोकातां स्वोच तद्विदुर्दुधा ७ ६ ॥
 अनुगत्या तभार्थादं काजर्धं मलितान्यभाष ।
 कस्यास्त्वपदागिरस्यातागधयतुमागतम् ७ ७ ॥
 भोगार्थमपि तद्वाच्यं तस्य कैलास्यमादर्धं ।
 तुल्यमिहाधोगेतिही किं हि न स्यात्तन्मात्रम् ७ ८ ॥
 भावानुबंधितो भोगास्त्वशिलस्तस्य जाकतः ।
 इति भोगावाधिकारी विलसोऽजकिं चर्धेत् ७ ९ ॥
 यतोऽर्थान् भोगादो जाकस्यि जलो मयः ।
 जतः कुचदिवानोऽदे हीवकस्तस्य हेतिव ७ १० ॥
 कैलास्यं विचये तुंसां विचिकन्य हि कथ्यते ।
 काकतं किं च हीवाहकं हि ७ ११ ॥

अदूरक्षेमदा नूनं प्राप्य मार्गमनर्गलम् ।
 प्रत्यावर्तितको नाम प्रयुक्तः शुद्धदर्शनः ॥ १२ ॥
 दोषदृष्ट्या यदि त्याज्यो विषयस्तद्गृहेण किं ? ।
 प्रक्षालनाद्भिः पंकज्य दूरादस्पर्शनं वरम् ॥ १३ ॥
 पित्रे निवेद्यन्नेवमिदमेव तदागतः ।
 देवैर्लोकानिकैरुचे दिवः प्रणतमीलिभिः ॥ १४ ॥
 प्रमीद मदनादाते प्रमीद ज्ञानदीपिते ।
 प्रमीद जगदीशान प्रमीद परमेश्वर ॥ १५ ॥
 आज्ञयंजवेनिर्वेदस्तथ सार्थोद्वादि यः ।
 उत्तरक्रियया देय कृतार्थः क्रियतामयम् ॥ १६ ॥
 अयाग्यादिद्वयंमं श्यानोदयगतस्य ते ।
 ज्ञानभानोम्नमोर्गुर्न्य भद्रयलोकः प्रतीक्षते ॥ १७ ॥
 मुक्तिवर्त्मनिहंधाना मंति दुर्नयतस्कराः ।
 ध्ययसरे जगतां तेषु स्वप्नमायः प्रभाष्यताम् ॥ १८ ॥
 ताग्रत्याहस्य देय मनेर्ब्रधे प्रतिधमम् ।
 यगद्दामभूतप्रस्यं संधुर्नैवाननेन्दुना ॥ १९ ॥
 अयनस्य ततो देयं जगमुर्देयमहर्षयः ।
 तदमिप्रायषोधार्यप्रमोदीत्कुल्लयशुभः ॥ २० ॥
 नुगापैहं पुगे धायतदनु त्रिदिशाधिनाः ।
 धारणागिमुगामेदुगामनोत्रामधोधिना ॥ २१ ॥
 विलंथ्य समथं छारे दीवार्गिनिर्वेदिनाः ।
 मसो रक्षमयी देवण्यामीदृशगृत्तार्धनाः ॥ २२ ॥

१ अत्र द्रव्यनिर्देश मन्त्रोक्तः । २ मोक्षमार्गदर्शनात् । ३ नुगापैहियम्
 ४ अनुगापैहं देवः अमर्षः अमृतात्स इति बोधः ।

नप्रभूमिभूतां मये हेमर्षाटोपवेदिनम् ।

गान्धर्व्यामर्षे मेकलद्वयमंष्ट्रमोपमम् ॥ २३ ॥

आश्रयस्थगितानिकपद्यगामलिङ्गिया ।

निर्वेदभयनिष्क्रान्तिसंश्लेषे यत्किञ्चनम् ॥ २४ ॥

विनयायनतोर्वीजमुकृत्वात्तानुमानुमिः ।

धनपुनिसिगादीष्टं माश्रुयेत्यमिषांशुदम् ॥ २५ ॥

अनुतेपुनमाश्रयादीनाक्षणापादिमान् कर्मैः ।

अवक्ष्येय एतदंतमंतयेव यत्किञ्चनः ॥ २६ ॥

नदृष्टिपानमाश्रयेत्तुमाश्रयमंश्वरा ।

मजमाश्रुदाटाश्रुमाश्रुदाहंदिमिनयः ॥ २७ ॥

गर्षोमर्षेद्वयमस्या नृप्याता कामयिद्विषे ।

इदं निवेदयामागं शुक्रात्तत्तदित्थमन ॥ २८ ॥

अमर्षोदयतापीदं गार्षोमंश्वरात्तत्तत्तत्तत् ।

किं पुनस्त्रिदिव्यादस्वाशोमात्तद्वयतेत्ययः ॥ २९ ॥

निर्वेदवनेत द्वेषाये वल्लेन यत्किञ्चनस्यस्य ।

उत्तारिदं त्वात्तदगं श्वरा यत्किञ्चनस्यस्य ॥ ३० ॥

इत्येवं नृप्यात्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ।

आलेख्ये इत्यगुत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ॥ ३१ ॥

इत्येवं नृप्यात्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ।

इत्येवं नृप्यात्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ॥ ३२ ॥

इत्येवं नृप्यात्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ।

इत्येवं नृप्यात्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ॥ ३३ ॥

इत्येवं नृप्यात्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ।

इत्येवं नृप्यात्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत्तत् ॥ ३४ ॥

आरुष्टमराष्ट्रिपतत्कौसुमी दिवः ।
 तत्स्वयंयत्मालेय निर्मुक्ता निर्वृतिधिया ॥ ३५ ॥
 विचित्रमणिनिष्टपूतकचिमैचकितांशरा ।
 शिथिकाचामरस्थानानुपतस्थे तर्माश्वरम् ॥ ३६ ॥
 अयहृन्नयनीपालाः तथा तं पद्ममकम् ।
 परं क्रमेण गीयांणाः कर्मारिथिजयैरिणाम् ॥ ३७ ॥
 विषोषेन जगद्भानोविभयप्रगरं परः ।
 शोकांधतमसं छत्रं संकुचन्मुत्तरंजम् ॥ ३८ ॥
 आगमाद् रादानंदि पुरंदरपुरस्ठितः ।
 स्थेष्ट्यभोगयिकथागायध्वत्थयनर्माश्वरः ॥ ३९ ॥
 इंद्रहस्तप्रतिभ्यस्तस्तेनाकलकलधरे ।
 अरित्या प्राग्मुषं तत्र स्फुटिकोपलमंडले ॥ ४० ॥
 बद्धांजलिबंधाण प्राग्गतमः गिरेभ्य इत्यलम् ।
 नितुंलुपुः पुनर्केशान् पंथमिरेदमुषिभिः ॥ ४१ ॥
 तत्केदारगदिमादाय मयया शीघ्रवारिधौ ।
 निदर्था गोऽपि यद्गामे जाकेनापि न शंभ्रमाः ॥ ४२ ॥
 नेता निमगंरुचयानि मुक्तेनापकयद्दमी ।
 ममे तु केवलं तेन मुक्तया मणिमादया ॥ ४३ ॥
 सद्भ्रातृविशेषस्य दीशानंतगत्यार्णे ।
 मन्वपयनामापि प्रस्य प्रातुरभूत्प्रभोः ॥ ४४ ॥
 इयंध्य दिवमान देवः स्फुटमत्कृतउषिः ।
 यात्वादिधमे प्रागन् मुक्तमनेदमकमपः ॥ ४५ ॥
 रात्रा धर्मोदयस्तत्र धर्मरात्रमुपलिनम् ।
 प्रत्यक्षदीपमामोर्दित्तिप्रकल्पितनांजलि ॥ ४६ ॥

मुक्तं पायत्रं तत्रं प्रतिपाद्य यथायिधि ।
 इदं प्रथयिता पाद्या प्रोवाण्य पृथिवीयनिम् ॥ ४३ ॥
 इतः स्वल्पविशेषो मे देव स्वर्गाद्यादिभिः ।
 तत्पुगेयान्तर्निर्णयं दृष्ट्या प्राप्ताणि यामया ॥ ४८ ॥
 दृग्ग्लयोऽपि देवस्य दृग्ग्लहायमहेदिनाम्
 संविधानं पुनः किं न भुक्तये मुक्तयेऽपि वा ॥ ४९ ॥
 अनुगत्य तर्मादानं निवृत्त्य च तदाख्या ।
 अदमतीश्विद्विद्वाधीदाक्षिमाद्यैर्येनकम् ॥ ५० ॥
 पायत्रे तु घने चापि न कदाभिलषोनिधिः ।
 प्रतिमायोगमाख्याय तर्थाः स्थानुमिष विगतः ॥ ५१ ॥
 मीधी तस्य प्रभावेन निरुद्धां च एतन्निष्ठियाम् ।
 जम्बूद्वयविजानीनां छिन्नीकभृतामिव ॥ ५२ ॥
 भोगिनो धर्मसंतता दिग्भेदेन दिग्भावेः ।
 अन्वपूर्णात निगताः सायामहेतुदादिनाम् ॥ ५३ ॥
 धिपत्नीः निर्लिचोदमात्राण्यधीः ।
 यद्गम्येत मुक्तोऽपि नित्यधीवर्तीकेश्वर ॥ ५४ ॥
 अयुताद्वैततर्थाः तस्य तर्मागतं निवृत्तिम् ।
 वरीतधैराचसंघ वरी तीव्रऽपि तस्यैव ॥ ५५ ॥
 दिग्भे तद्वीतानंदवर्तिनात्पु यत्निवृत्तम् ।
 अत्राल्लुगीतव्याविलामभोगेदेव्यधीदिना ॥ ५६ ॥
 अत्राचंनइतस्थानमवस्था न तत्रा प्रिया
 तर्गलपदीनो ज्ञानः यद्वादात्तद्वत्तम् ॥ ५७ ॥
 अविभाज्यवर्ते कथंमि भुक्तानंदव्य वाच्युत्तम्
 मुक्तिभावेनैव च देवमाधीः इत्याज्यम् ॥ ५८ ॥

विमानप्रतिबंधस्य हेतुं त्रिभु विगिन्यताम् ।
 तेन संददते देव कोपस्त्रेण शत्रुता ॥ १९ ॥
 रवेरिव मुनेस्त्राण धात्रा वृष्टन्ममोगुणा ।
 जलात् द्युःसहस्रांशः सूर्यकोप इयान्मम ॥ २० ॥
 अणुमंतेनतोऽग्रेऽन्दोऽदितस्तद्विरांतयः ।
 कोपाद्दुरधिपं शत्रुत्वमपि मयाभ्यर्षिताम् ॥ २१ ॥
 परंस्त्रायामहमेव हसता जायतेसूयता ।
 नेत्राग्राहयता शत्रवे निर्दयंममपि वयः ॥ २२ ॥
 त्रिंशत् एतन्न पंचाशं विमानप्रतिबंधिनम् ।
 अस्त्राणां नातिदीपण जीवनेन त्रिमुद्यमे ॥ २३ ॥
 इयान्ममार्तिरंशुपस्त्रं विपयेभ्यो विरम्य च ।
 आनेदपस्त्रावस्त्रामपि पातयि विमानयः ॥ २४ ॥
 परिक्षाण्य शत्रुशक्तिं प्रकृतस्त्राणादीनि चितः ।
 इच्छामतिरिष्यामीं शत्रुम शिर्विद्वेऽद्विदम् ॥ २५ ॥
 नाशिवानां चतानीये विमानप्रतिबंधिनम् ।
 त्रिंशत्परिणमि पाकालयव्यवर्तिनीयम् ॥ २६ ॥
 इति च मया एव सता जगद्भुविचकारिणम् ।
 अस्त्रं च वचनं च जीवनेऽस्त्राणां च मम ॥ २७ ॥
 इति च वचनं च मया एव सता जगद्भुविचकारिणम् ।
 अस्त्रं च वचनं च जीवनेऽस्त्राणां च मम ॥ २८ ॥
 इति च वचनं च मया एव सता जगद्भुविचकारिणम् ।
 अस्त्रं च वचनं च जीवनेऽस्त्राणां च मम ॥ २९ ॥
 इति च वचनं च मया एव सता जगद्भुविचकारिणम् ।
 अस्त्रं च वचनं च जीवनेऽस्त्राणां च मम ॥ ३० ॥

फणामणिशिलाघाताचूणितो जलद्वयः ।
 षन्निरे भुजगैद्रम्य दयासधूमोद्रमधियम् ॥ ८३ ॥

एकत्ववितर्कयीचारध्यानवह्निप्रभायतः ।
 यातिकर्मघनं सयैमदोषविजिगीषणा ॥ ८४ ॥

आविशंभूय देयस्य तत्क्षणादेव केवलम् ।
 परं ज्योतिरनाभासं सयैतो भासनक्रमम् ॥ ८५ ॥

ततः प्रथोपं जयकारतूर्ध्वं—
 दिव्याकस्मां उल्लसितं समंतात् ।

निशम्य निर्मुच्य तुर्यं नदय
 षभूय शत्रुः स ष कांदिदीकः ॥ ८६ ॥

अतन्वशाणाम्नादा प्रभुमुपेत्य वसंति—
 त्रिनेद्र जगतांगणे जय जयानिरक्षेति माम् ।

ननाम मुहुटोल्लसन्मणिमिहज्जितम्—
 दुर्येणं जगत्प्रथमुक्तं त्रिपुषिपुल्लसोधलक्ष्मीनिधिम् ॥ ८७ ॥

केयाः शर्यचतुर्निकायगतयः संभूय गद्गुतयो
 मक्तिर्मादमयादवममतयो गादोपगुशोभयः ।

धोत्रधोन्नम्य, यनंस्लनुभूतां नृत्येष्ट मेप्रवियै—
 षकस्त्वस्य ममाजनामजनया संकैकशानिप्रदम् ॥ ८८ ॥

इति श्रीपार्थनाथचरितम् । श्रीपार्थनाथचरितम् । श्रीपार्थनाथचरितम् ।

मदय ध्ये केयन्तज्ञान प्रादुर्भाषो मम

१८६७ मने

दादशः सर्गः ।

—१५८—

शक्रान्दा तिममहकमनवधेदी
 ग्नादिष्टवास्तुनाकोरेग धनेभ्यरेल ।
 धीमानधीकण्णव्दवममण्यथा
 माग्यायकी तिमवधेजैगदीभ्रवण्य ॥ १ ॥
 नशानयममिमर्या नवकाया धरित्री
 विप्रोदमनकिण्णवर्षट्टविलमदेदा ।
 गृध्रास्तु दिग्गयनिलाः प्रविलोकयाम्ये
 यी लवं मिति विलता वृत्तैरुत्ताराणाम् ॥ २ ॥
 मानिषगमोपुत्तानुमुत्तनिरीरु
 आचारगिनिलियल्लु वलवकिमरे ।
 जलवयप्रतिनिर्ग वृत्तया निवपुक्त ॥ ३ ॥
 ज्जाला जलेन परमाधविभाषनेन
 माधितममक तिला गरीध परीधे ।
 वपुत्तममम मलेयु वपुत्तमिना
 नीरुति वधस्तुतिना वलवममका ॥ ४ ॥
 भाववाववधवातिनेवमम लीध
 व वपुत्तमममममम विर विरु ।
 यथावधममममममममममममम
 दत्ताधामना वपुत्ति वपुत्तममका ॥ ५ ॥
 व्यापानवद्विमममममममममममम
 वपुत्त विममममममममममममममम

घाटं बभ्रुवुरमुरेंद्रभुजप्रभाय—

श्रीन्यादिताद्रिकधराविद्यरोपमेयाः ॥ ६ ॥

स्तुताः पयोधरपथस्कटिका च यज्ञाः

कृताप्रकोटिदन्तिन्नमदभ्रकृताः ।

भयंरुददययुयो नितरामभय्या

मागे गगे म्यलनकालितया विद्यनुः ॥ ७ ॥

आकंपमानमनियद्धमहापताका

स्त्रंभाश्र तुंगशिगारस्त्रिभ्रतहेमयस्याः ।

आपुनयभ्रय जयोप्रतिबंधिमाणा

देयस्य त्पुंमनिमानरजांनि पुंगाम् ॥ ८ ॥

नृप्यन्ति-श्रयवनिता श्रिदीगिगमो

यापुननेमेरुतादृतिनाश्रयशाणाः ।

शांदाप्रिनीमुण्डताकडिमोदराणां

लीलां यभुयेनितकालयदाहकानाम् ॥ ९ ॥

अंतक्यवितरकालभयनिदपशाई—

श्रामश्रोमश्रिलयाः कृतकाट्टिमुण्याः ।

स्कारंगुणामुलिमुरीतेगुणामयेय

देयस्य कर्मविज्ञयं जगनेकश्रिणोः ॥ १० ॥

मायेयुः परमयस्तुतिवडर्भाति—

रुद्रं द्रिहकृतीरुतस्तस्तस्तस्तुता ।

पष्टैःश्रिव प्रकदयत्यथ संदस्तुति

स्तुतास्तयं विद्विना जगतिर्वैभुव ॥ ११ ॥

वंदीश्रयो भूतददुग्मविबद्वीष्टे

प्रादयार्डिदृष्ट इव दीपमयेकमुनिः ।

प्रादयार्डिदृष्टिर्गोर्दृष्टो जगता—

देयस्योपय इव विद्विषार्डिदृष्टिः ॥ १२ ॥

रीर्षे बभूव दृष्टिचोक्तप्रयोगत्वं च —

देवादिदिव्यमिषं केवलं बोधरोचय ॥ १० ॥

ये स्यान्निद्रिगुणित्वा जगदेकवर्षे

गुणानिगमगुणुत्वा तद्वितीष भेदे ।

वल्गाः प्रादुश्यन्ति पश्येद्दाम्नेन चन्द्रे

निर्गुणं कर्मचरं दुर्यधं चरं वा ॥ ११ ॥

इत्यस्यदा सप्तधरं प्रणम्यै कल्पयेत् —

ईशाधिद्वयगुणरीषेण च चण्डालम् ।

नामसाधीं च कल्पयात् शिवात्तमस्य ह्युपधा —

द्विगुणं च कल्पयन्नेति चण्डालगुण ॥ १२ ॥

दुर्गात् च स्ववपसापचरं चण्डालम् —

सप्तधरं कल्पयन्नात्वा इव मन्त्रं शीघ्रम् ।

ये शीघ्रं कल्पयन्नात्वात्प्राप्तानिवा

कल्पयात् स्ववपसापचरं शीघ्रं कल्पयेत् ॥ १३ ॥

शीघ्रं कल्पयेत् शीघ्रं शीघ्रं च शीघ्रं च

श्रीगार्ग्यस्यैव कल्पयन्नेति चण्डालम् ।

एतच्चण्डालं च कल्पयात् स्ववपसापचरं

शीघ्रं कल्पयेत् शीघ्रं चण्डालम् ॥ १४ ॥

इति गार्ग्यविरचितं श्रीगार्ग्यस्यैव कल्पयेत्

शीघ्रं कल्पयेत् शीघ्रं शीघ्रं चण्डालम् ॥ १५ ॥

इति गार्ग्यविरचितं श्रीगार्ग्यस्यैव कल्पयेत्

शीघ्रं कल्पयेत् शीघ्रं शीघ्रं चण्डालम् ॥ १६ ॥

इति गार्ग्यविरचितं श्रीगार्ग्यस्यैव कल्पयेत्

शीघ्रं कल्पयेत् शीघ्रं शीघ्रं चण्डालम् ॥ १७ ॥

इति गार्ग्यविरचितं श्रीगार्ग्यस्यैव कल्पयेत्

शीघ्रं कल्पयेत् शीघ्रं शीघ्रं चण्डालम् ॥ १८ ॥

छादना वर्गः ।

आम्नासि तावदुपयोगनिवर्तमुनिः
 वायायधीश मित्रवेदमिनिशोऽर्गो ।
 अर्गोतर् ए पृथुमीप्रभृतेऽपमादु—
 गिष्यमाणविषयाप्रतियामतिष्टः ॥ २६ ॥
 तस्मिन् प्रयादिनि वाक्य मयंति वेमि—
 दुक्तविभनेदिनरभेनभा विषयताः ।
 नेमर्भयो ए तदुपुनरुदुप्रवेने
 प्रायशमा न पयनप्रतिहण्यमाणाः ॥ २७ ॥
 ताताविधातय विवर्तयतादनादि—
 वैधवतामायति बभंर्गपयताः ।
 वेनात्तवेत्तयमाताकेयमाययती
 दूयते पापयति दूयतीत्यादि ॥ २८ ॥
 तस्याण्य नोवृत्तिनिदाननिव र्णुलि—
 रत्तयतादृयति मुक्तिर्यायुति ।
 द्वापयतीपदासतशायायमिक्त ।
 मयवेतने नि मयवेत्तयमायमाता ॥ २९ ॥
 जीयादिचरमुविषयाः निवृत्तु वीट
 विंकासयुति मयवेत्तयमायुतिरुत्तु
 उर्गाति तापमुपपदा मया निवृत्तयत्
 वेता नितातमायुताद्विषयतय ॥ ३० ॥
 निवृत्तिर्वा निवृत्तयमायुत्तयमायता
 मयवेत्तयमायुताद्विषयती इतिव्य
 विवृत्तयमायुताद्विषयमायुत्तयमायता
 विपुनवायुत्तयमायुताद्विषयमायुता ॥ ३१ ॥
 मयवेत्तयमायुताद्विषयमायुताद्विषयमायुता
 निवृत्तयमायुताद्विषयमायुताद्विषयमायुता ॥ ३२ ॥

शृंगेषु यस्य गुणतुंगतया प्रसिद्धा
तिदिग्गता गतरजस्कृतया जिनैन्द्रः ॥ ४१ ॥

आमंद्रदुन्दुभिरव्यप्रतिशब्दभूमि—
रुद्रामगह्वरमुल्लेख्य धराधरैन्द्रः ।
तस्यानिचारमसहाय्यं सवेभर्तुः
शक्रो मनुगाशिवरोल्लसितोऽस्रहूः ॥ ४१ ॥

द्वारोपकंठयिलसन्मलिशुंगकूटे
तत्कुंभनिर्भनियिजुभितदेयमूर्धे ।
मिद्धः स्वयंवर्यरभ्रगियोपतस्थे
सयोगिनं प्रति नयामुत्पुण्यवृष्टिः ॥ ४३ ॥

तत्रागम्युत्पन्नस्य स्वयमेव दृश्यो
मागेन योगमयगुह्यं समोक्तमिच्छतुः ।

शुक्लं परं शृणुस्तत्कियमप्रगति
ध्यानं तिधानमियं विनयुहे शकार ॥ ४४ ॥

पयाशरीशमययर्जिनि तत्रयदीतो
ध्यानानले न यत्पयस्येत्पलाययोर्ती ।

उदात्तकर्मियधिना सममागुया म—
यामादिबंधनतमिचनता निनाय ॥ ४५ ॥

निर्मिष कर्मनिषले शकले तद्वेष
निर्दुम्य नु सप्रमृते पदमभरोहत् ।

आमेदिरे न कस्यात्तिजदृष्टयोर्य—
रुद्रैजा निगमिता निदलप्रदेशाः ॥ ४६ ॥

वेधेभ्यैव समुत्पन्ना वस्तुनिर्वाये—
शान्देभ्यैव समुत्पन्नोऽगतमतिमतिः ।

सम्यग्गतमां विनयुहे विविदिष्टिगया
प्रतया स्वये विप्रवशात्पततोर्वेदेने ॥ ४७ ॥

शृंगेषु यस्य गुणतुंगतया प्रसिद्धा
निर्दिष्ट गता गतरजस्कृतया जिनेन्द्रः ॥ ४१ ॥

आमंद्रदुन्दुभिरवप्रतिशब्दमूर्ध्नि—
रुद्रामगह्वरमुखैस्म धराधरेन्द्रः ।
तस्यातिचारमसहाय्येय सर्वमनुः
शक्रो सतुगाशिखरोल्लखितोऽन्नकृष्टः ॥ ४६ ॥

द्वारोपकंडायिलमन्मणिशृंगकूटे
तत्कुंभनिर्मतिविजृम्भितदेवसूयै ।
सिद्धेः स्वयंवरवरभ्रगिवोपतम्भे
संयोगिनं प्रति नयामुरपुष्पवृष्टिः ॥ ४७ ॥

तत्राममृत्य सदसः स्वयमेव दृश्यो
भासेन योगमवमुच्य समोक्तुमिच्छुः ।
शुल्कं परं व्युपरतक्रियमप्रपानि
ध्यानं निधानमिद्य चित्तगृहे चकार ॥ ४८ ॥

पचाश्रमीममयवर्त्तिनि तत्त्वदीप्तो
ध्यानानले स यत्नवत्यखिलाचलोक्ती ।
उद्धातकर्मविधिना मममायुषा म—
ग्रामादिवंधगतमिधनतां निनाय ॥ ४९ ॥

निर्मिय कर्मनिगलं सकलं तदेव
निहुंत्य दुःखममृतं पदमप्यरोहत् ।
आसेदिरे च करधारिजकुड्मलौघे—
रंतदंशा नियमिनां निदलप्रदेशाः ॥ ५० ॥

देवस्तद्वय समुपेत्य चतुर्ग्निकार्य—
रानंदमंदरमनोगतमक्तिभारैः ।
तस्यांतिमां जिनरघोर्विधिषिद्धिरिग्या
प्राग्या स्वयं विजयराज्यगतैर्विभेने ॥ ५१ ॥

निस्संगसारकथयैव सुखं प्रयच्छन्

भव्यान् कृतार्थयसि दिव्यनिकामसेव्यः ॥ ५८ ॥

त्वामव्ययं सकलयत्सल सप्रभावं

चित्ते करोमि वरमंप्रपदैस्तवीमि ।

क्लेशार्णवप्रभवदुःसहदुःखपंकात्

मामुद्धरिष्यति हि धर्मविनोद एवः ॥ ५९ ॥

आस्यां गुणस्तव कृतौ तव देव दक्षा

श्रेयो लभंत यतिकान्तगुणार्णवस्य ।

तुभ्यं नमोस्तु वरदेव प्रयत्तुकामाः

सम्यक्त्वर्तुंगमहिमानमुपाश्रयन्ति ॥ ६० ॥

स्वार्थानबोधमयनिर्मलदर्पणां—

विंवागतात्रिविधकालजगत्रयाय ।

भव्यांबुजाकरविबोधनतत्पराय

श्रीपार्श्वनाथभगवन् भवते नमोऽस्तु ॥ ६१ ॥

त्रिभुवनगुरुमेवं सिद्धिलक्ष्मीसमेतं

त्रिभुवनशिखरश्रीसांधशृंगाधिरूढम् ।

सविनयमामिनृत्य स्वर्गिणामप्रगण्या

निजपदममिजगमुस्तिग्मरादिमप्रकाशम् ॥ ६२ ॥

श्रीनिर्वाणनवांदयाद्रिशिखरप्रव्यक्तबोधस्तुति—

स्वर्गां प्राप्रहरोपि नीनविनयप्रोद्दामपुण्यांजलिः ।

भव्यांभोजयिकाशैभयकरो देयात्स यः श्रेयसि

देवो दीर्घमुपांतिमो जिनरयिः कथत्यसिद्धिः श्रियम् ॥ ६३ ॥

इति श्रीपार्श्वनाथमूर्तिविरचिते श्रीपार्श्वनाथजिनेश्वरचरिते

महाकाव्ये भगवन्निर्वाणगमने नाम

द्वादशः सर्गः ।

निष्पन्नोऽयं नवरससुधास्यंदमिधुप्रबंधो
जीयादुद्यैजिनपतिमवप्रक्रमैकान्तपुण्यः ॥ ६ ॥

अन्यश्रीजिनदेवजन्मविभवव्यावर्णनाहारिणः
श्रोता यः प्रसरत्प्रमोदसुभगो व्याख्यानकारी च य ।
सोऽयं मुक्तिघघ्निसर्गसुभगो जायेत किं चैकश-
स्सर्गात्तिऽप्युपयाति वाङ्मयलसहृद्दर्मापदश्रीपदम् ॥ ७ ॥

इति प्रशस्तिः ।

समाप्तमिदं पार्श्वनाथचरितम् ।

